चन्दामामा
अक्तूबर १९७८

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने एको स्केच पेनसे बनाये हैं।"
EKCO
स्केच पेन
रंग ही रंग... जिनसे बच्चों को प्यार है. वे
चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की सुप्त कला को प्रोत्साहन
दीजिए... उन्हें एको स्केच पेन का
आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
EKCO
SKETCH PEN
FOR
SKETCHING
COLOURING & SIGNING
वितरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/८, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
ADVERTS/WP/216/HIN/G8
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.

चन्दामामा

अक्तूबर १९७८

★

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

"वीर हनुमान" रंगीन धारावाही इस अंक के साथ समाप्त हो जाती है। अगले अंक से "देवी भागवत" का शुभारंभ होता है।

इस महीने की बेताल कथा "यह कोई अच्छी सलाह नहीं!" एक प्रबोधात्मक कहानी है।

अमर वाणी

ना तंत्री वाद्यते वीणा,
नाचक्रो वर्तते रथ:,
नापतिस्सुख मेधेव
या स्या दपि शतात्मजा ॥ १ ॥

[बिना तार वाली वीणा नहीं बजती। बिना पहियेवाला रथ नहीं चलता। सौ पुत्रों के होने पर भी पति विहीना स्त्री सुखी नहीं हो सकती।]

वर्ष : ३१ अक्तूबर १९७८ अंक : २

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

गंगाधर जेना, पिचुकुलि (ओरिस्सा)

प्रश्न : चांद का नाम 'चन्दामामा' कैसे पड़ा ?

उत्तर : देव और दानवों ने मंदर पर्वत को मथनी बनाकर अमृत पाने के ख़्याल से जब क्षीर सागर का मंथन किया, तब उसमें से हालाहल के साथ और कई चीज़ें पैदा हुईं। उनमें से लक्ष्मी एक हैं; चन्द्रमा भी हैं। इस कारण चन्द्रमा लक्ष्मी के छोटे भाई बने। लक्ष्मी देवी मानव जाति के लिए माता के समान हैं, इसलिए चन्द्रमा हमारे लिए मामा याने चन्दामामा बन गये।

हेच. शाह, ठाणा (महाराष्ट्र)

प्र : इन्द्र धनुष क्या चीज़ है ?

उ : सूरज की रोशनी में सात रंग मिले हुए हैं। इसीलिए शायद यह प्रतीति है कि सूरज के रथ में सात घोड़े हैं। हम अकसर देखते हैं कि चित्रकार उन घोड़ों को सात रंगों में चित्रित करते हैं।

आसमान में वर्षा करनेवाले बादलों की फुहार में जब सूर्य की किरणें प्रसारित होती हैं, तब विभिन्न रंगों की किरणें एक दूसरे से अलग होकर सूर्य की विपरीत दिशा में बादलों पर पड़ती हैं। उसी को हम 'इंद्र धनुष' कहते हैं। यह इंद्र धनुष हमेशा सूर्य के सामनेवाली दिशा में होता है। सूर्य की रोशनी को प्रिज़म याने समपार्श्व कांच द्वारा प्रसारित करने से इंद्र धनुष के रंग और साफ़ दिखाई देते हैं।

अप्पलय्य भट्ल नागराज शर्मा, पोलेरु (आन्ध्र)

प्र : प्रश्नोत्तरवाला शीर्षक सिर्फ़ तेलुगु में ही चलाते हैं या अंग्रेज़ी आदि अन्य भाषाओं में भी ?

उ : अंग्रेजी चन्दामामा में यह शीर्षक पहले ही से चालू है। इस समय सभी भाषाओं में प्रारंभ किया गया है। अगले महीने से सभी भाषाओं के कुछ ख़ास प्रश्नों के उत्तर दिये जायेंगे।

[६३]

बंदर की बातें सुनकर मगर मच्छ अपने मन में विचारने लगा—"यह मेरी मूर्खता थी कि मैंने सच्ची बात बताई। मुझे फिर से इस बंदर का विश्वास प्राप्त करना होगा।" यों सोचकर बंदर से बोला—"दोस्त! मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही मजाक़ किया। वरना मैं थोड़े ही मूर्ख हूँ कि यह समझूं, कहीं कलेजा प्राणी के शरीर से अलग हुआ करता है? कहीं कोई भी पत्नी अपने पति के मित्र को मार डालना चाहेगी? इसलिए तुम मेरे घर चलो, तुम्हारी भाभी बड़ी आतुरता के साथ तुम्हारा इंतज़ार करती होगी।"

"अरे दुष्ट! मैं अब तुम्हारे साथ थोड़े ही चलूंगा। सुनते हैं, पुराने जमाने में गंगादत्त ने कहा था—"भूखा आदमी सब तरह के पाप करने को तैयार हो जाता है। दुर्बल व्यक्ति के मन में दया नामक कोई चीज नहीं होती। गंगादत्त ने कुएँ के पास लौटने से इनकार करते हुए प्रियदर्शन से कहने को कहा था।" बन्दर ने समझाया। "वह कैसी कहानी है?" मगर मच्छ ने पूछा। इस पर बंदर ने "अंधा बदला" नामक कहानी सुनाई:

एक कुएँ में गंगादत्त नामक एक मेंढ़क राजा था। उसके रिश्तेदारों ने उसका अपमान किया था। इस वजह से वह उबहन की मदद से कुएँ के बाहर आया और सोचने लगा कि अपने रिश्तेदारों के साथ कैसे बदला लिया जाय?

इसी समय उसने देखा कि प्रियदर्शन नामक साँप अपनी बांबी में घुस रहा है।

गंगादत्त ने सोचा—"मैं इस साँप को कुएँ के भीतर ले जाकर अपने सारे

रिश्तेदारों का सर्वनाश करूँगा। शत्रु का अंत उसके शत्रु के साथ ही करना होगा।"

यों विचार कर गंगादत्त साँप के बिल के पास गया और पुकारा—"प्रियदर्शन! एक बार बाहर निकलो तो सही।"

यह पुकार सुनकर साँप सोचने लगा—यह पुकार सर्प जाति की नहीं है। मेरे साथ साँपों को छोड़ अन्य जाति के प्राणी दोस्ती नहीं करते! अन्य लोगों की जाति, प्रकृति, निवास और शक्ति का परिचय पाये बिना उनके साथ मित्रता नहीं करनी है। हो सकता है कि यह पुकारनेवाला व्यक्ति कोई संपेरा या जहरीली दवाएँ देनेवाला कोई वैद्य हो? यों विचार कर प्रियदर्शन ने पूछा—"तुम कौन हो?"

"मैं मेंढ़कों का राजा गंगादत्त हूँ। तुम्हारे साथ मैत्री करने के ख्याल से आया हुआ हूँ।" मेंढ़क ने जवाब दिया।

"क्या यह विश्वास करने योग्य बात है? सूखी घास और आग के बीच दोस्ती कैसी? जिसे मारनेवाला हो, उसके पास सपने में भी कोई जाने की बात नहीं सोचता। इसलिए तुम अपने व्यर्थ के प्रलाप बंद करो।" साँप ने कहा।

"तुम्हारा कहना वाजिब है। तुम हमारे सहज शत्रु हो। मगर मैं दुश्मन के हाथों में हारकर अपमानित हो तुम्हारे पास आया हुआ हूँ। बुजुर्गों का कहना है कि जान के डर व धन की हानि होते वक़्त शत्रु का भी आश्रय लेना होता है। मेंढ़क ने समझाया।

"बताओ, तुम्हारे दुश्मन कौन हैं?" साँप ने पूछा। "मेरे रिश्तेदार ही मेरे दुश्मन हैं।" मेंढ़क ने कहा।

"वे कहाँ रहते हैं? कुएँ में? तालाब में या सरोवर में?" साँप ने पूछा।

"कुएँ में।" मेंढ़क ने उत्तर दिया।

"मेरे तो पैर नहीं हैं, मैं पेट के बल रेंगता हूँ। इस कारण मैं कुएँ में उतर नहीं सकता। अगर मान लो, उतर भी

गया तो तुम्हारे रिश्तेदारों को मारने के लिए ताक लगाने के लिए मेरे योग्य कोई स्थान नहीं है। इसलिए तुम अपने रास्ते चलो। बुजुर्ग यह भी बताते हैं कि जो योग्य है, उसी चीज़ को खाना है। जो हज़म हो सकता है, उसे ही खाना है, जो खतरे की चीज़ नहीं है, उसे ही खाना है।"

"इसकी चिंता तुम न करो। तुम चुपचाप मेरे साथ चलो। कुएँ में पहुँचने का रास्ता मैं दिखा देता हूँ। उसी में रहकर तुम मेरे सारे रिश्तेदारों को मार सकते हो।" मेंढ़कों के राजा ने कहा।

इस पर साँप ने सोचा—"मेरी उम्र ढल गई है। मैं कभी एकाध चूहे को पकड़ पाता हूँ। यह कुलांगार मुझे अपने दिन आराम से काटने का कोई उपाय बताना चाहता है। मैं इसके साथ जाकर मेंढ़कों को खा डालूँगा। बुजुर्ग बताते हैं कि जिसकी शक्तियाँ जवाब दे चुकी हैं, उसे सुखपूर्वक दिन काटने का मार्ग ढूँढ़ना होगा।" यों विचार कर मेंढ़क से बोला— "तब तो गंगादत्त! तुम रास्ता दिखाओ, मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ।"

"प्रियदर्शन! मैं न केवल तुम्हें कुएँ में पहुँचने का आसान रास्ता दिखाता हूँ, बल्कि वहाँ पर तुम्हारे रहने के लिए उचित स्थान भी दिखा दूंगा। मगर मेरी शर्त यह है कि तुम मेरे परिवार और मेरे सेवकों की कोई हानि न करो। मैं जिन मेंढ़कों को दिखाता हूँ, तुम्हें उन्हीं को खाना होगा।" मेंढ़क ने शर्त लगाई।

"अब तो तुम मेरे दोस्त बन गये हो। इसलिए तुम्हारे रिश्तेदारों को मैं अपने ही लोग मानूँगा। तुम जिन लोगों को खाने के लिए कहोगे, उन्हीं लोगों को खाऊँगा।" यों समझाकर साँप अपने बिल में से बाहर आया। मेंढ़क के साथ गले लगकर उसके साथ हो लिया।

मेंढक ने साँप को उबहन की मदद से कुएँ में उतारा, उसके रहने के लिए पानी के समीप एक बिल दिखलाया। इसके

बाद मेंढक ने अपने रिश्तेदारों को साँप को दिखाया, साँप बराबर उन्हें खाता गया।

मेंढ़क राजा के सारे रिश्तेदार जब समाप्त हुए तब साँप ने कहा–"गंगादत्त, मैंने तुम्हारे सारे रिश्तेदारों को खा डाला है। मुझे कोई और आहार दिखला दो।"

"दोस्त, तुमने मेरे सारे शत्रुओं को मारकर मेरा काम पूरा किया है, इसलिए तुम उबहन के सहारे ऊपर आकर यहाँ से चले जाओ।" मेंढ़क ने कहा।

"गंगादत्त! तुम्हारी बातें मुझे ठीक नहीं जंचती। तुम मुझे अपने पुरानी बांबी में चले जाने को कैसे कहते हो? उसमें तो किसी दूसरे साँप ने कभी अपना निवास बना लिया होगा! इसलिए मैं यहीं रहूँगा। तुम अपने परिवार के लोगों में से रोज़ एक को सौंप दिया करो, वरना मैं सबको खा डालूंगा।" साँप ने कहा।

यह बात सुनकर मेंढ़क चिंता में पड़कर सोचने लगा–"इस साँप को यहाँ लाकर मैंने कैसी बेवकूफ़ी की? अगर मैंने उसकी इच्छा की पूर्ति नहीं की तो वह हमारे वंश का विनाश कर बैठेगा। बुज़ुर्गों ने बताया है–प्रबल शत्रु के साथ मैत्री प्राणों को खतरे में डालनेवाले ज़हर के समान है। इसलिए मैं अपने ही लोगों में से रोज़ एक को साँप के हाथ सौंपते जाऊँगा। बलवान व्यक्ति के लिए जो दुर्बल व्यक्ति रोज मुट्ठी भर आटा न देकर तृप्त नहीं करता, वह अपना सारा आटा खो बैठता है। जब सर्वस्व के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है, तब विवेकशील व्यक्ति आधा तो त्याग कर बैठता है। यों विचार कर मेंढ़क अपने परिवार के लोगों में से एक को रोज़ साँप को दिखाता गया। गंगादत्त जिस मेंढ़क को दिखाता था, उसके अलावा साँप उसकी आँख बचाकर कुछ और मेंढ़कों को खाता जाता था। जैसे मैले कपड़े धारण करनेवाले कहीं भी लुढ़ककर बैठ जाता है, वैसे ही जो व्यक्ति नीति को त्याग देता है, वह सब तरह के अत्याचार करने को तैयार हो जाता है।

भल्लूक मांत्रिक

[३]

[जंगल के गाँवों में बसनेवाली प्रजा को लुटेरों तथा डाकुओं के हमलों से मुक्त करनेवाले कालीवर्मा को पड़ोसी राजा से डरकर राजा जितकेतु ने मृत्यु दण्ड सुनाया। जब उसका शिरैच्छेद किया जा रहा था, तब बधिक से परसु खींचकर कालीवर्मा ने अश्वदल के नेता का सर काट डाला। तभी "आदि भल्लूक!" की पुकार उसे सुनाई दी। बाद...]

'आदि भल्लूक!' की पुकार सुनते ही सारे घुड़ सवारियों ने सर घुमाकर उस आवाज़ की दिशा में देखा। कालीवर्मा घोड़े पर से नीचे कूद पड़ा। उसने इसके पूर्व अश्वदल के नेता के हाथ अपनी जो तलवार दी थी, उसे लेकर म्यान में रख ली। इतने में एक पहाड़ी घाटी से झरनेवाले जल प्रपात के पीछे से एक दीर्घ काय व्यक्ति सामने आया।

"यह कोई मांत्रिक होगा!" यों विचार करते कालीवर्मा ने सोचा कि उसे वहाँ से भाग जाना चाहिए, फिर उसे संदेह हुआ कि ऐसा करने पर घुड़ सवार उसे रोकेंगे। तब उनके चेहरों की ओर परखकर देखने लगा। घुड़ सवार सब भय और संभ्रम के साथ जल प्रपात की ओर ताक रहे थे।

जल प्रपात के पीछे से पुकारनेवाला व्यक्ति अब घुटने भर गहरी पानी की

धारा को पारकर किनारे पर आया। वह देखने में बलिष्ठ मालूम हो रहा था। काले भालू का चमड़ा धारण किये हुए था। हाथ में मजबूत दण्ड था। उसकी मूठ पर एक ही हीरे में खुदा भालू का सिर चकाचौंध कर रहा था।

कालीवर्मा तब तक भागने की सोच रहा था, पर अपनी ओर बढ़नेवाले उस विचित्र पोशाकवाले को देख वह चकित हो जड़वत खड़ा रह गया। घुड़ सवार दल और भैंसे पर सवार बधिक भी भयकंपित हो रहे थे।

भालू का चमड़ा धारण किया हुआ व्यक्ति उनके समीप आकर बोला–"मैं जानता हूँ कि वक़्त पर अगर मैंने आदि भल्लूक का नाम स्मरण न किया होता तो यहाँ पर और ज्यादा खून-खराबी हुई होती! जानते हो? मेरा नाम भल्लूक मांत्रिक है!"

पल-दो पल तक सब लोग मौन रह गये। कालीवर्मा ने दायें हाथ से तलवार और बायें हाथ में बधिक के हाथ से छीन लिया गया परसु उठाकर उच्च स्वर में भल्लूक मांत्रिक से बोला–"महाशय! तुमने बिना हमारे पूछे अपना नाम बता दिया। यह तो बड़ा अच्छा हुआ। मगर अब रही; तुम्हारे कथनानुसार खून-खराबी के बंद होने की बात! सावधानी से सुन लो, अब कोई भी मेरे रास्ते को रोकने की जुर्रत करेगा तो थोड़े और सर कटकर नीचे गिरनेवाले हैं!" ये शब्द कहते कालीवर्मा ने घोड़े को हांक दिया।

"हे युवक! तुम बड़े ही हिम्मतवर हो! पल भर रुक तो जाओ!" यों कहकर भल्लूक मांत्रिक ने अपने मंत्र दण्ड से भैंसे पर जड़वत बैठे बधिक को चुभो दिया। तब पूछा–"अबे, नक़ाब ओढ़े तुम इस सिरस वन के पिशाच हो या राजा के प्रधान बधिक हो?"

"हुजूर! मैं पिशाच नहीं हूँ, राजा का प्रधान बधिक हूँ। वे जिन्हें सजा देते हैं,

उनके सर काटना मेरा काम है।" बधिक ने जवाब दिया। साथ ही मांत्रिक का भेष देख भागने की कोशिश करनेवाले भैंसे की गर्दन सहलाने लगा।

उस वक़्त भल्लूक मांत्रिक अश्वदल के नेता की लाश को इतमीनान से निहारते हुए बोला–"तब तो शिरच्छेद के दण्ड से बचकर, एक राजसेवक का सर काट करके भाग जाने की सोचनेवाले एक अपराधी के साथ तुम कैसा व्यवहार करने जा रहे हो?"

"हुजूर! मैं बेहथियार हूँ। मेरे परसु को अपराधी कालीवर्मा ने ज़बर्दस्ती छीन लिया है।" बधिक ने भर्राये हुए स्वर में उत्तर दिया।

कालीवर्मा ने भांप लिया कि यह मांत्रिक बधिक और घुड़ सवारों को मुझ पर उकसा रहे हैं। यों विचार कर परसु को बधिक की ओर बढ़ाकर कालीवर्मा बोला–"अरे नक़ाबवाले पिशाच! लो, तुम्हारा यह परसु! अगर तुम में हिम्मत है तो कोशिश करके देखो, कहीं तुम मेरे रास्ते को रोक सकते हो?"

दूसरे ही क्षण बधिक ने अपने नक़ाब को उतारकर दूर फेंका, लड़खड़ानेवाले स्वर में बोला–"कालीवर्मा, तुम महान योद्धा हो! मैं सिरस वन के भैरव की

क़सम खाकर कहता हूँ कि मेरा घमण्ड उतर गया है!"

"घमण्ड के साथ तुम्हारा नशा भी उतर गया होगा! अब मेरे रास्ते से हट जाओ!" यों कहकर कालीवर्मा थोड़ी दूर खड़े घुड़ सवारों से बोला–"बताओ, तुम लोगों का क्या निर्णय है? तुम लोगों ने अपने सरदार की हालत देख ली है न?"

"शिरच्छेद का दण्ड अमल करनेवालों में से एक मर गया तो दूसरे ने हथियार डाल दी। हम यह खबर राजा को देंगे। लेकिन रास्ता रोककर जान गँवानेवाले मूर्ख हम नहीं हैं।" घुड़ सवार एक स्वर में बोले।

"तुम लोगों ने सही बात बताई।" ये शब्द कहकर कालीवर्मा ने घोड़े को हांक दिया, वहाँ से जाने लगा, तभी भल्लूक मांत्रिक कालीवर्मा के घोड़े की लगाम थामकर चिल्ला उठा–"भल्लूक पाद गुरु! आखिर हमें जैसे व्यक्ति की जरूरत थी, वह मिल गया है।" फिर कालीवर्मा को लक्ष्य करके बोला–"काली वर्मा! लगता है, तुम यह वास्तविक बात तक भूल गये हो कि यहाँ पर लोक प्रसिद्ध महान मंत्र वेत्ता भल्लूक मांत्रिक भी हाज़िर हैं।"

कालीवर्मा का बचपन से ही मांत्रिक, ओझा, वगैरह के प्रति जरा भी आदर का भाव न था। ऐसे कई लोगों को उसने अपने गाँव और अड़ोस-पड़ोस के गाँवों में देख लिया था।

अब भल्लूक मांत्रिक की बातें सुनने पर कालीवर्मा ने सोचा कि यह मांत्रिक उसका अनादर कर रहा है, तब वह क्रोध में आकर बोला–"ओह, महाशय! क्या आप का नाम भल्लूक मांत्रिक है? वैसे आप का नाम सुनते ही डर लगने लगता है। आप ने इसके पहले एक और भल्लूक का नाम लिया था। वे कौन हैं? मुझ जैसे साधारण व्यक्ति के लिए कौन भल्लूक क्या होता है? इसकी याद रखना भी मुश्किल है।"

कालीवर्मा ने भल्लूक मांत्रिक के नाम का मजाक़ उड़ाया, फिर भी भल्लूक मांत्रिक नाराज़ नहीं हुआ, उल्टे मुस्कुराते हुए बोला–"मेरे गुरुजी का नाम भल्लूक पाद है। मेरा नाम भल्लूक मांत्रिक है। आगे होनेवाले अद्भुत कार्यों को देखकर खुश होनेवाले तुम इन नामों के बीच की इस छोटी सी समानता पर नाहक़ घबराओ मत।"

"घर से निकलने के बाद जिन मुसीबतों का सामना मुझे करना पड़ा, उन्हें देख मैं एक दम ऊब गया हूँ। अब मैं जल्दी जल्दी अपने गाँव पहुँचकर खेतीबाड़ी करके

उसी से संतुष्ट होना चाहता हूँ।" यों कहते कालीवर्मा ने परसु को बधिक की ओर फेंक दिया और लापरवाही से घोड़े पर एड़ लगाई।

घोड़ा हिल उठा, दस-बारह क़दम चलकर अब दौड़ लगाने को था, तभी भल्लूक मांत्रिक ऊँचे स्वर में बोला-"कालीवर्मा, रुक जाओ! तुमने देखा भी है कि तुम्हारे सामने से आनेवाले लोग कौन हैं?"

यह चेतावनी पाकर कालीवर्मा ने सर उठाकर आगे की ओर देखा। एक विशाल सिरस वृक्ष के पीछे से तीन घुड़ सवार तेजी के साथ आ रहे हैं। उनके बीच का व्यक्ति रेशमी वस्त्र और बड़ी पगड़ी पहने हुए था। उसके अगल-बगल में दो कवचधारी थे जिनके हाथों में तलवारें थीं और कंधों पर चमकनेवाले ढाल थे।

उन्हें देखते ही कालीवर्मा ने घोड़े की लगाम खींचकर उसे रोक दिया। कवचधारी घुड़ सवारों के बीच रेशमी वस्त्र पहना हुआ व्यक्ति हाथ उठा कर कालीवर्मा की ओर इशारा करते बधिक से बोला-"अबे नगर के प्रधान बधिक! महाराजा ने इस अपराधी को शिरच्छेद का दण्ड दिया है, पर तुमने अब तक वह दण्ड अमल क्यों नहीं किया?"

बधिक थर-थर कांपते भैंसे पर से उतर पड़ा और सोच ही रहा था कि क्या जवाब दे, तभी भल्लूक मांत्रिक बधिक से सवाल करनेवाले व्यक्ति के समीप पहुँचा और पूछा-"तुम्हीं हो न महाराजा जितकेतु के प्रधान मंत्री जीवगुप्त?"

मंत्री जीवगुप्त ने सोचा कि राजा तथा उसके प्रति भी आदरसूचक शब्दों का प्रयोग न करके अशिष्ट ढंग से सवाल करनेवाला यह व्यक्ति कोई कपट बैरागी होगा, मंत्री ने आँखें लाल-लाल करके क्रोधपूर्ण शब्दों में कहा-"सिपाहियो, यह

"सरकार! बाघ-वाघ कुछ नहीं! उस बैरागी के हाथ के मंत्र दण्ड की मूठ में बिठाये गये भालू का सर देखिए! उसने इसके पूर्व मुँह खोलकर दाढ़े फैलाये अपनी आँखों से अग्नि कण बिखेर दिया था।" घुड़ सवारों ने जवाब दिया।

जीवगुप्त ने भल्लूक मांत्रिक के मंत्र दण्ड के भालू के सर को निरखकर परिहासपूर्ण हँसी हँसते पूछा-"अबे बैरागी, तुम्हारी बातों और चेष्टाओं को देखने से तुम एक घमण्डी मालूम होते हो! क्या तुमने मंत्र-तंत्र या जादू-टोना सीख लिया है?"

बैरागी कौन है? पहले इसे लात मारकर दूर फेंक दो।"

मंत्री का आदेश पाकर मंत्री के बगल में स्थित घुड़ सवार तलवार खींचने को हुए, पर भल्लूक मांत्रिक के हाथ में मंत्र दण्ड को देख चकित हो खड़े रह गये। घोड़े जोर से हिनहिनाते पीछे की ओर क़दम बढ़ाने लगे।

मंत्री की समझ में न आया कि बात क्या है? वह विस्मय के साथ अपने दोनों अंग रक्षकों की ओर नज़र दौड़ाकर बोला-"क्या बात है? तुम लोग ऐसे कांपते हो जैसे बाघ को देख हिरण कांप उठते हैं?"

मंत्री की बातें सुन भल्लूक मांत्रिक ने आँखें तरेरते हुए उसकी ओर तीक्ष्ण दृष्टि प्रसारित कर कहा-"कहावत है-सन्यासी परिपूर्ण होने पर बैरागी बन जाता है, और इसी तरह गिरगिट अपना रंग बदलता है? पर मैं न सन्यासी हूँ और न बैरागी हूँ-मैं भल्लूक मांत्रिक हूँ। जय! आदि भल्लूक की!" चिल्लाकर भल्लूक मांत्रिक ने अपने मंत्र दण्ड से समीप के एक ठूंठ पर जोर से दे मारा।

मंत्र दण्ड की चोट खाकर ठूंठ से अग्नि कण छितर आये और दूसरे ही क्षण धक् धक् करते सारा वृक्ष जल गया। मंत्री जीवदत्त का घोड़ा भड़क उठा और अपनी

पिछली टांगों पर खड़े हो ज़ोर से हिनहिनाते दौड़ पड़ा। मंत्री के कवचधारी अंग रक्षक भय कंपित हो मंत्री के समीप अपने घोड़ों को दौड़ाया।

पल-दो पल तक सभी लोग चकित हो मौन रह गये। दूर से यह सारा दृश्य देखनेवाला कालीवर्मा घोड़े को हांककर भल्लूक मांत्रिक के समीप पहुँचा, घोड़े से उतरकर बोला–"ओह! तुम साधारण मायावी मांत्रिक नहीं हो! महान मंत्र वेत्ता हो! कपटी व दुष्ट मंत्री को तुमने जैसे घबड़ा दिया, वैसे इसके राजा को भी तुम्हारी मंत्र शक्ति के द्वारा भय कंपित करके उसे सही ढंग से शासन करने का प्रबंध क्यों नहीं करते?"

"शाबाश! हे युवक! तुम न केवल हिम्मतवर हो, बल्कि बुद्धिमान भी हो! मेरे मन की बात तुमने ताड़ ली!" इन शब्दों के साथ कालीवर्मा की तारीफ़ की। तब मंत्री से पूछा–"मंत्री, तुमने मेरी शक्ति का परिचय पाया! अब बताओ, यहाँ पर इन लोगों को आदेश देनेवाले कौन हो सकते हैं? तुम या मैं?"

मंत्री जीवगुप्त जलनेवाले पेड़ की ओर ताक रहा था। उसे डर लगा कि वह यहाँ आकर खतरे में फँस गया है! उसे मौन देख भल्लूक मांत्रिक ने अपना सवाल फिर से दुहराया, इस पर मंत्री कंपित स्वर में बोला–"महाशय भल्लूक मांत्रिक! मैंने तुम्हारी सारी शक्तियों को अपनी आँखों से देख लिया है! आप सिर्फ़ यहीं पर नहीं, बल्कि अगर आप के पास समय हो तो राजमहल में प्रवेश करके वहाँ पर भी महाराजा जितकेतु को आदेश और सलाहें भी दे सकते हैं!"

"ओह! आखिर इस महामंत्री की कैसी दुर्गति हो गई है?" ये शब्द कहते कालीवर्मा ने घुड़सवारों की ओर देखा और भैंसे के पास चिंतित खड़े बधिक पर दृष्टि दौड़ाई।

भल्लूक मांत्रिक ने अपना मंत्र दण्ड ऊपर उठाकर उच्च स्वर में कहा–"तुम

सब लोग मेरे आदेश को सावधानी से सुन लो।" फिर बधिक से बोला–"अबे, सुनो! सर काटनेवाले तुम कटे हुए सिरों को भी धड़ से जोड़कर सीने की तरकीब जानते होगे! क्यों ठीक है? तुम इसी वक्त घुड़सवार दल के नेता के सर को धड़ से सीकर घोड़े पर बिठा दो और उसे रस्सों से बांध दो!"

बधिक ने पल भर में अपना काम पूरा किया और घुड़सवार दल के नेता की लाश को घोड़े पर बिठाकर रस्सों से बांध दिया। मगर जल्दबाजी में उसने यह काम कर दिया था, इस वजह से घुड़सवार दल के नेता के चेहरे को पीठ की ओर रखकर सी दिया था, इस कारण ऐसा लगता था कि घोड़े पर घुमा हुआ सिरवाला कलेवर सवार है।

इस भूल को देख मंत्री जीवगुप्त को छोड़ भल्लूक मांत्रिक के साथ सभी लोग ठहाके लगाकर हँस पड़े। भल्लूक मांत्रिक ने जीवगुप्त की ओर क्रोध भरी दृष्टि डालकर आदेश दिया–"हे मंत्री! तुम अब बधिक के वाहन भैंसे पर और तुम्हारे वाहन पर बधिक सवार होने जा रहे हैं!"

जीवगुप्त चुपचाप थर थर कांपते भैंसे पर सवार हो बैठ गया। इसी प्रकार बधिक मंत्री के घोड़े पर सवार हुआ और उसने अपने हाथ लगाम थाम ली। इस पर भल्लूक मांत्रिक ने सब को नगर की ओर चलने का आदेश दिया।

राजा जितकेतु के मंत्री के साथ हुई इस बेइज्ज़ती पर प्रसन्न हो कालीवर्मा ने कहा–"इस जुलूस को देख नगर की जनता ज़रूर खुश होगी। अब मैं अपने गाँव चला जाता हूँ।" यों कहकर अपने घोड़े पर सवार हो कालीवर्मा जाने को हुआ, तब भल्लूक मांत्रिक मंत्र दण्ड उठाकर बोला–"कालीवर्मा, क्या तुमने मेरा आदेश नहीं सुना?"

"आदेश! कैसा आदेश? यहाँ पर मुझे कौन आदेश देनेवाला है?" इन शब्दों के साथ कालीवर्मा ने म्यान से तलवार निकाली। (और है)

यह कोई अच्छी सलाह नहीं

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया।

पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मैं समझता हूँ कि आप ने कुशल और समर्थ मंत्रियों की सलाह लेने के बाद ही यह श्रम साध्य कार्य करने का निश्चय किया होगा, मगर कभी कभी समर्थ मंत्री भी गलत सलाह दे सकते हैं। वह सलाह बेकार सिद्ध हो सकती है। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को राजा मणिकेतु का वृत्तांत सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: मणिपुर के राजा मणिकेतु के बहुत समय बाद एक कन्या हुई, जिसका नामकरण मणिमंजरी किया गया। माता-पिता ने उसे अत्यंत लाड़-प्यार से पाला-पोसा, जिससे वह हठी

बेताल कथाएं

रखती। इन दोनों समस्याओं का एक साथ हल करना है तो केवल एक ही उपाय था। वह यह कि पहले ही इस बात की घोषणा करनी है कि राजकुमारी के साथ विवाह करनेवाले युवक का राज्याभिषेक किया जाएगा। इस घोषणा को सुनकर भले ही राजकुमारी के साथ विवाह करने की कोई कामना न करे, पर राज्य के लोभ में पड़कर थोड़े से राज कुमार उसके साथ विवाह करने को आगे आयेंगे। पर साथ ही राजा किसी अयोग्य राजकुमार को अपना वारिस बनाना नहीं चाहते थे। यह भी जरूरी था कि राजकुमारी के साथ विवाह करनेवाला राजकुमार मणिमंजरी के स्वभाव को बदलनेवाला हो और समर्थतापूर्वक राज्य का संचालन करने की क्षमता रखता हो।

बन बैठी। वह हर बात पर बिगड़ पड़ती और अपने हाथ में जो भी चीज़ आ जाती, उसे उन पर फेंक देती। जो मुँह में आया, कह देती। राजा और रानी भी यह सोचकर सदा शंकित रहते, न मालूम कब वह किस पर नाराज़ हो जाती है।

मणिमंजरी जब शादी के योग्य हो गई, तब राजा के सामने दो समस्याएँ उत्पन्न हुईं। पहली समस्या यह थी कि राजकुमारी रूपवती होने पर भी वह अत्यंत क्रोधी स्वभाव की है, इसलिए कोई भी युवक उसके साथ शादी करने को तैयार न होगा। दूसरी समस्या राजा के अनंतर वह शासन कार्य संभालने की क्षमता नहीं

इसी विचार से राजा मणिकेतु ने जय और विजय नामक दो देशों के राजकुमारों को मणिमंजरी के पति बनने योग्य माना और उन दोनों के पास निमंत्रण भेजकर अपनी राजधानी में बुलवा भेजा।

पहले राजा ने विजय को बुलवाकर एकांत में उसे राजकुमारी का सारा वृत्तांत सुनाया और कहा—"राजकुमार, मैंने अपनी पुत्री के साथ विवाह करनेवाले युवक को मेरे राज्य के वारिस के रूप में

घोषणा करने का निर्णय कर लिया है। मगर मेरी पुत्री अत्यंत क्रोध स्वभाव की है। इसलिए यदि मेरी पुत्री के साथ विवाह करना हो तो राज्य के लाभ के साथ एक झगड़ालू पत्नी के साथ निर्वाह करने का नुक़सान भी उठाना पड़ेगा। इसलिए तुम लाभ-हानि का मूल्यांकन कर तब अपना निर्णय मुझे सुना दो।"

विजय ने खीझकर कहा–"आप तत्काल मुहूर्त का निर्णय न करके यह अनावश्यक चर्चा क्यों कर रहे हैं?" इस पर राजा ने विजय को भेज दिया, जय को बुलवाकर उसे भी राजकुमारी का वृत्तांत सुनाया।

जय ने राजा की बातें शांति के साथ सुन लीं, तब कहा–"महाराज! क्रोध का मूल कारण मनुष्य की दुर्बलता है। ऐसे लोगों के प्रति मैं दया दिखाता हूँ। मैं उनकी प्रकृति समझने की चेष्टा करता हूँ। इसलिए मणिमंजरी के साथ विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

राजा ने सोचा था कि दोनों राजकुमारों के साथ चर्चा करने के बाद वे स्वयं यह निर्णय कर पायेंगे कि किसके साथ मणिमंजरी का विवाह करना ज़्यादा उचित होगा। पर राजा कोई निर्णय न कर पाये। वैसे जय और विजय की प्रकृति में अंतर है, किंतु उनमें किसके साथ राजकुमारी का विवाह करने पर ज़्यादा लाभदायक सिद्ध होगा, यह बात राजा समझ न पाये। इसलिए राजा ने अपने

मंत्री की सलाह माँगी । मंत्री बचने का प्रयत्न करते हुए बोले—"महाराज! इस संबंध में आप ही को निर्णय लेना ज्यादा समुचित होगा । आप की पुत्री तथा राज्य का हित आप से बढ़कर कौन ज्यादा जान सकता है?"

"मंत्री महोदय! राजा या पिता बनने मात्र से कोई सर्वज्ञ नहीं होता । इसलिए तो मैंने आप की सलाह माँगी । केवल सलाह देना आप का कर्तव्य है । उसे अमल करने या न करने की जिम्मेदारी मेरी है ।" राजा ने कहा ।
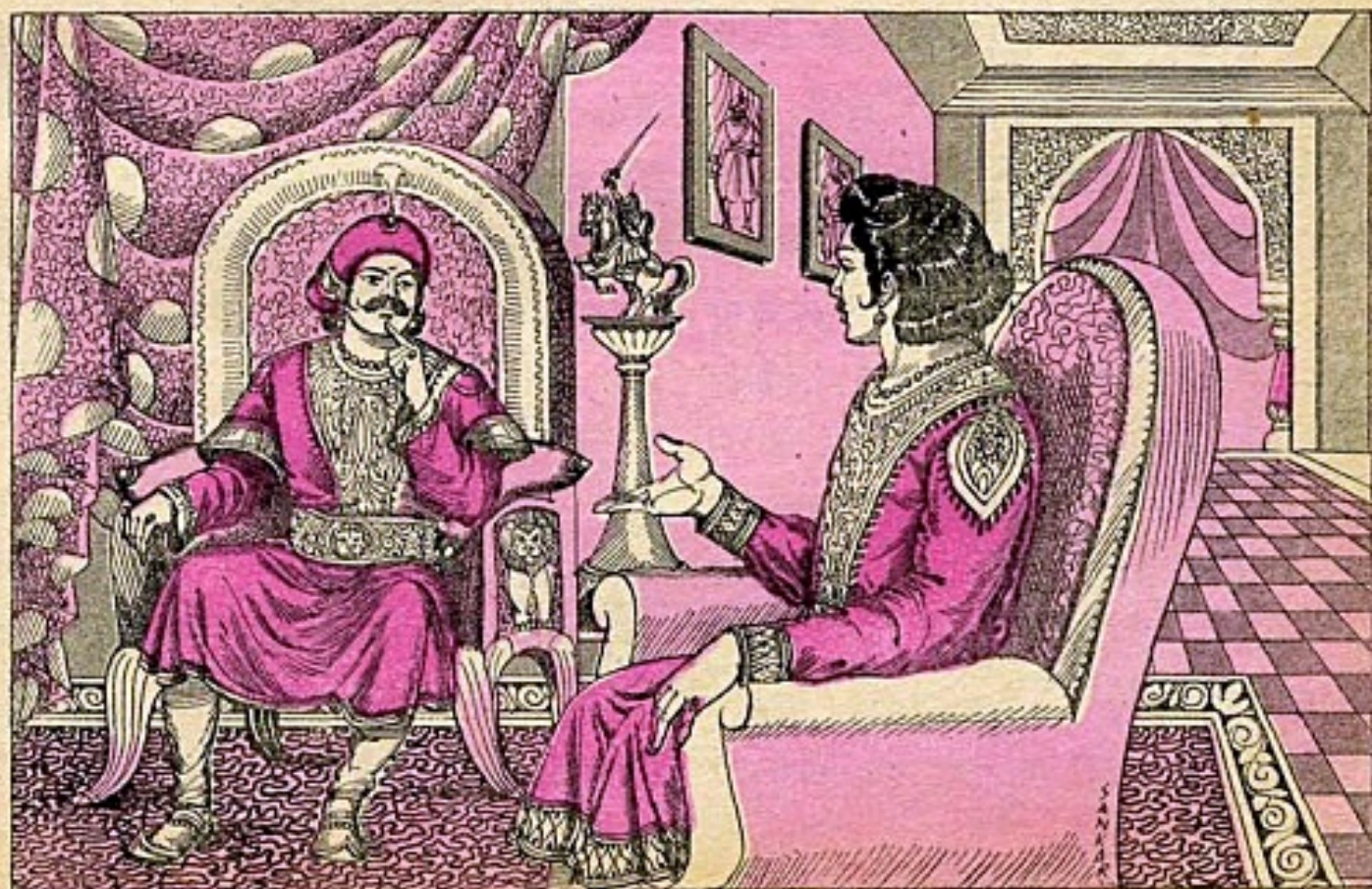
मंत्री ने कहा—"विजय उद्दण्ड स्वभाव का व्यक्ति है । राजकुमारी एक क्षण भी उसके साथ निर्वाह न कर सकेंगी । जय साधु प्रकृति के हैं और विनयशील हैं । उनके प्रभाव से राजकुमारी अपने स्वभाव को बदल सकती हैं । इसलिए मेरा सुझाव है कि जय के साथ ही राजकुमारी का विवाह करना उचित होगा ।" इसके बाद मणिमंजरी का विवाह जय के साथ संपन्न हुआ । विवाह के बाद मणिमंजरी की प्रकृति में कोई अंतर न आया, बल्कि वह और उद्दण्ड निकली । प्रति दिन वह अपने पति के साथ लड़ती-झगड़ती रही; पर जय उसके प्रति सहानुभूति रखता था ।

राजा यह सोचने लगे कि जब राजकुमारी और जय के बीच सख्य भाव पैदा होगा, तब जय का राज्याभिषेक किया जाएगा । इस बीच राजा ने एक बार मंत्री से कहा—"मंत्री महोदय, आप ने जो सलाह दी, वह असफल सिद्ध हुई है । जय की उदारता को राजकुमारी उसकी असमर्थता मान बैठी है । ऐसी हालत में जय का राज्याभिषेक कैसे किया जाय? जो व्यक्ति अपनी पत्नी को नियंत्रण में नहीं रख सकता, वह देश को कैसे अनुशासन में रख सकेगा? यह सवाल कोई कर बैठे तो हम उन्हें क्या जवाब दे?"

मंत्री ने कहा—"महाराज! आप को इस संबंध में मेरी सलाह नहीं लेनी थी । मैंने

संकेत के रूप में आप का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया, लेकिन आप ने उस पर ध्यान नहीं दिया। इसलिए जब भी किसी की सलाह ली जाती है, उस वक्त हमें यह सोचना होगा कि जिससे सलाह ली जाती है, उस व्यक्ति का उस समस्या के साथ कोई सीधा वास्ता न हो।"

मंत्री की बातें सुनने पर राजा ने अपनी भूल समझ ली।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन! मणिकेतु ने मंत्री की सलाह माँगी। इसमें उनकी भूल ही क्या थी? मंत्री से राजा को सलाह नहीं लेनी है, यह कहने में मंत्री का क्या उद्देश्य है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आप का सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"यह बात सत्य है कि मंत्री से राजा को सलाह नहीं लेनी है। राजा ने मंत्री से दो समस्याओं के हल को लेकर सलाह माँगी—एक समस्या है—राजकुमारी के कौन योग्य पति सिद्ध हो सकता है? दूसरी समस्या है—मणिकेतु के बाद कौन शासन करने की ज्यादा क्षमता रखता है? हो सकता है कि एक ही व्यक्ति इन दोनों समस्याओं को हल करने की योग्यता न रखते हो! पर मंत्री ने स्वार्थवश राजकुमारी के योग्य पति का चुनाव न करके अपने मंत्रित्व को ज्यादा आसानी के साथ चलाने के लिए योग्य व्यक्ति को सुझाया हो। यदि कोई अन्य व्यक्ति होता तो वह दोनों समस्याओं के हल को समान रूप से दृष्टि पथ में रखकर सलाह देता। अब राजा की भूल यह है कि मंत्री की सलाह लेना उनकी भूल न थी, बल्कि उस सलाह को आँख मूंदकर अमल करने में थी। जो राजा मंत्री की सलाह का अंधानुकरण करके अपने भविष्य का विचार नहीं करते, उन्हें इसी प्रकार उलझनों में फंसना पड़ता है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

सब का रास्ता एक है

आग की दुर्घटना में रंगापुर के सारे घर जल गये, पर पटवारी का घर बच रहा। ग्रामवासियों ने पटवारी से निवेदन किया कि फिर से घर बनाने के लिए आर्थिक सहायता का इंतज़ाम करें।

"मेरे भी घर जल जाने के बाद मैं एक साथ राजा से सहायता की माँग करना चाहता हूँ।" पटवारी ने जवाब दिया।

दूसरे दिन पटवारी का घर भी जल गया–चाहे कारण कुछ भी रहा हो।

दूसरे ही दिन पटवारी सारे ग्रामवासियों को साथ ले राजा की सेवा में पहुँचा। उसने निवेदन किया–"महाराज! मेरा सारा गाँव जल गया है, फिर से मकान बनाने के लिए आप आर्थिक सहायता दिलाने की कृपा करें।"

राजा ने इतमीनान से उत्तर दिया–"तुम लोग थोड़े दिन ठहर जाओ! दो-तीन गाँव और जल जाने दो, मैं एक साथ सभी गाँवों की मदद करूँगा।"

उल्टा फैसला

जीवन के घर एक दुधारू गाय थी। वह रोज़ दस सेर दूध दिया करती थी। दूध बेचकर जीवन आराम से अपना परिवार चला लेता था। गाँव के मुखिये भैरव सिंह की आँख उस गाय पर पड़ी। उसने जीवन पर दबाव डाला कि वह गाय उसके हाथ बेच दे, पर जीवन ने अपनी गाय बेचने से साफ़ इनकार किया।

थोड़े दिन बाद जीवन को अपनी गाय बेच देनी पड़ी। क्यों कि उसे अपनी बेटी की शादी करनी थी। यों तो वह अपनी गाय मुखिये के हाथ बेच सकता था। मगर मुखिया गाय का सही मूल्य नहीं देगा। भैरव सिंह को छोड़ उसी गाँव के किसी दूसरे के हाथ गाय बेचना भी मुमक़िन न था।

इस कारण जीवन अपनी गाय को शहर में ले जाकर हाट में बेच देना चाहता था। जब जीवन अपनी गाय को हाट में ले जा रहा था, तब भैरव सिंह के बेटे नाग सिंह ने देखा। उसने सोचा कि किसी भी तरह से वह गाय ख़रीद कर अपने पिता की तारीफ़ प्राप्त करनी है। इस विचार के आते ही वह किसी से कहे बग़ैर हाट की ओर चल पड़ा।

शाम हो चली थी। जीवन की गाय पगहा तुड़वा कर हाट से भाग आयी और एक धान के खेत में घुसकर चरने लगी। उस खेत का मालिक गाय को मुखिये भैरव सिंह के यहाँ हाँक ले आया।

भैरव सिंह जीवन की गाय को देख अचरज में आ गया और पूछा–"क्या बात है सुजान सिंह? तुम जीवन की गाय को क्यों हाँक ले आये हो?"

"बाबू साहब! यह गाय मेरे खेत में घुस गई। इसने मेरी सारी फ़सल नष्ट

जयराम त्रिपाठी

कर दी। आप ही इसका न्याय करके मुझे कृपया हर्जाना दिलवा दीजिए।" सुजान ने मुखिये से बिनती की।

मुखिया भैरव सिंह इधर कई दिनों से जीवन पर नाराज़ था। अब उसे बड़ा अच्छा मौक़ा मिल गया। उसने जीवन का घमण्ड तोड़ना चाहा, उसने चौपाल पर इकट्ठे हुए बुजुर्गों से कहा–"बेचारे इस गरीब किसान सुजान ने साल भर मेहनत करके जो फ़सल पैदा की, उसे इस गाय ने बरबाद किया है। अपनी जिम्मेदारी का ख़्याल किये बिना गाय को इस तरह खेतों में चरने के लिए छोड़ देने के अपराध में उसका उचित हर्जाना देना न्यायसंगत है। इसलिए जीवन को दो दिनों के अन्दर सुजान को दो हज़ार रुपये जुर्माना चुका देना होगा!"

"वाह! वाह! बहुत ही बढ़िया इन्साफ़ है!" चौपाल के पास इकट्ठे हुए लोगों ने एक स्वर में मुखिये की तारीफ़ करते ऊँची आवाज़ में कहा।

उसी वक़्त भैरव सिंह का बेटा दौड़ते आ पहुँचा और बोला–"यह गाय यहाँ पर कैसे आ गई है? मैं सारे गाँव में इसकी खोज कर रहा हूँ!"

भैरव सिंह ने अचरज में आकर पूछा–"बेटा! इस गाय के वास्ते सारा गाँव छान डालने की तुम्हें क्या ज़रूरत थी?"

"बाबूजी! मैंने हाट में जीवन से यह गाय ख़रीद ली है!" नागसिंह ने कहा।

यह बात सुनते ही भैरव सिंह का कलेजा कांप उठा। यह बात स्पष्ट हो गई कि नागसिंह के द्वारा जीवन के यहाँ से गाय ख़रीदने के बाद ही वह भागकर सुजान के खेत में घुस गई है! गाय चाहे किसी की क्यों न हो, बुजुर्गों के सामने जो फ़ैसला सुनाया गया, उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता था!

इसके बाद सुजान को दो हज़ार रुपये का हर्जाना नागसिंह को चुकाना पड़ा। अपना फ़ैसला उल्टा हुआ देख भैरव सिंह हताश हो गया!
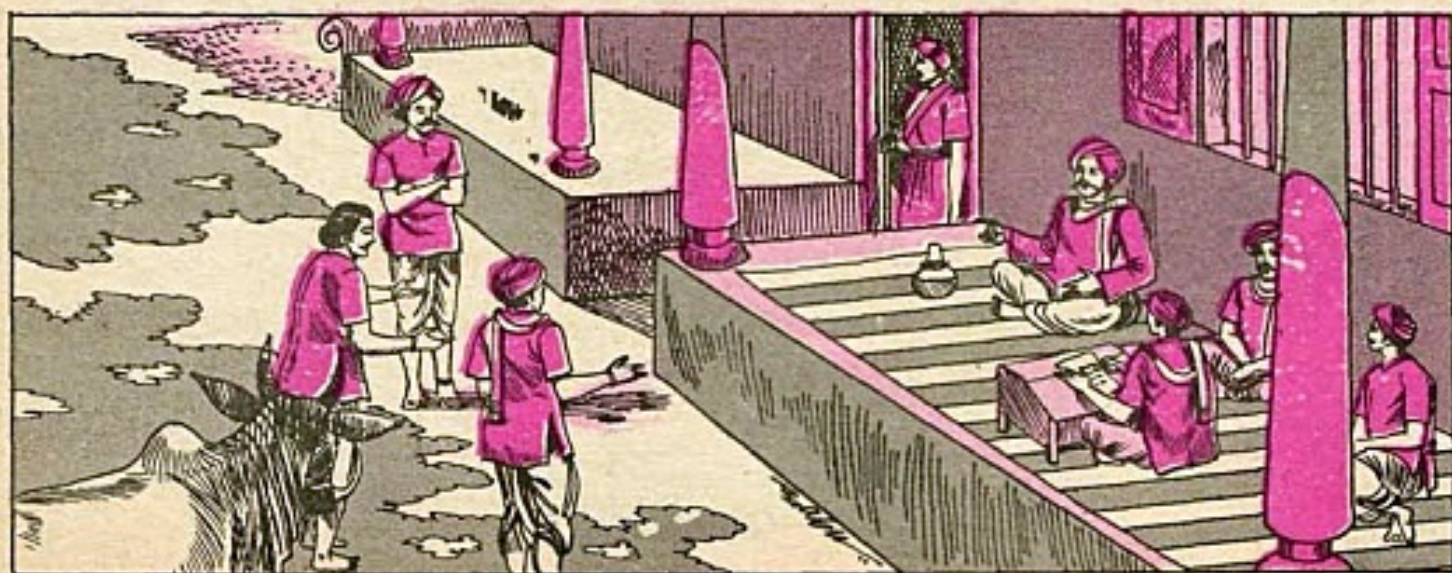
मंत्री की युक्ति

बात बहुत ही पुरानी है। कलिंग देश में डाकुओं का एक दल अकसर डाके डाला करता था। डाकुओं को पकड़ने के लिए राजा ने बड़ी कोशिश की, आख़िर एक डाकू पकड़ा गया। राजा सुनवाई करके सजा सुनाने को हुए, उस वक्त मंत्री ने खड़े होकर कहा—"महाराज! इसके अपराध पर सात साल की कारागार की सजा दी जा सकती है, मगर इसको सजा दिये बिना सही मार्ग पर चलने का मौक़ा देना ज्यादा उचित होगा।"

मंत्री के प्रति राजा के मन में आदर का भाव था, इस वजह से राजा ने डाकू को सजा दिये बिना छोड़ दिया। इसके एक हफ़्ते बाद दस डाकुओं का एक दल पकड़ा गया। उस दल में इसके पहले मुक्त किये गये डाकू के साथ डाकुओं के दल का सरदार भी था।

मंत्री की युक्ति सफल निकली। पहला डाकू मुक्त होते ही अपने दल के लोगों के साथ जा मिला। गुप्त रूप से उसका अनुसरण करनेवाले भेदियों को डाकुओं के अड्डे का पता चल गया। इस पर सब ने मंत्री की युक्ति की तारीफ़ की।
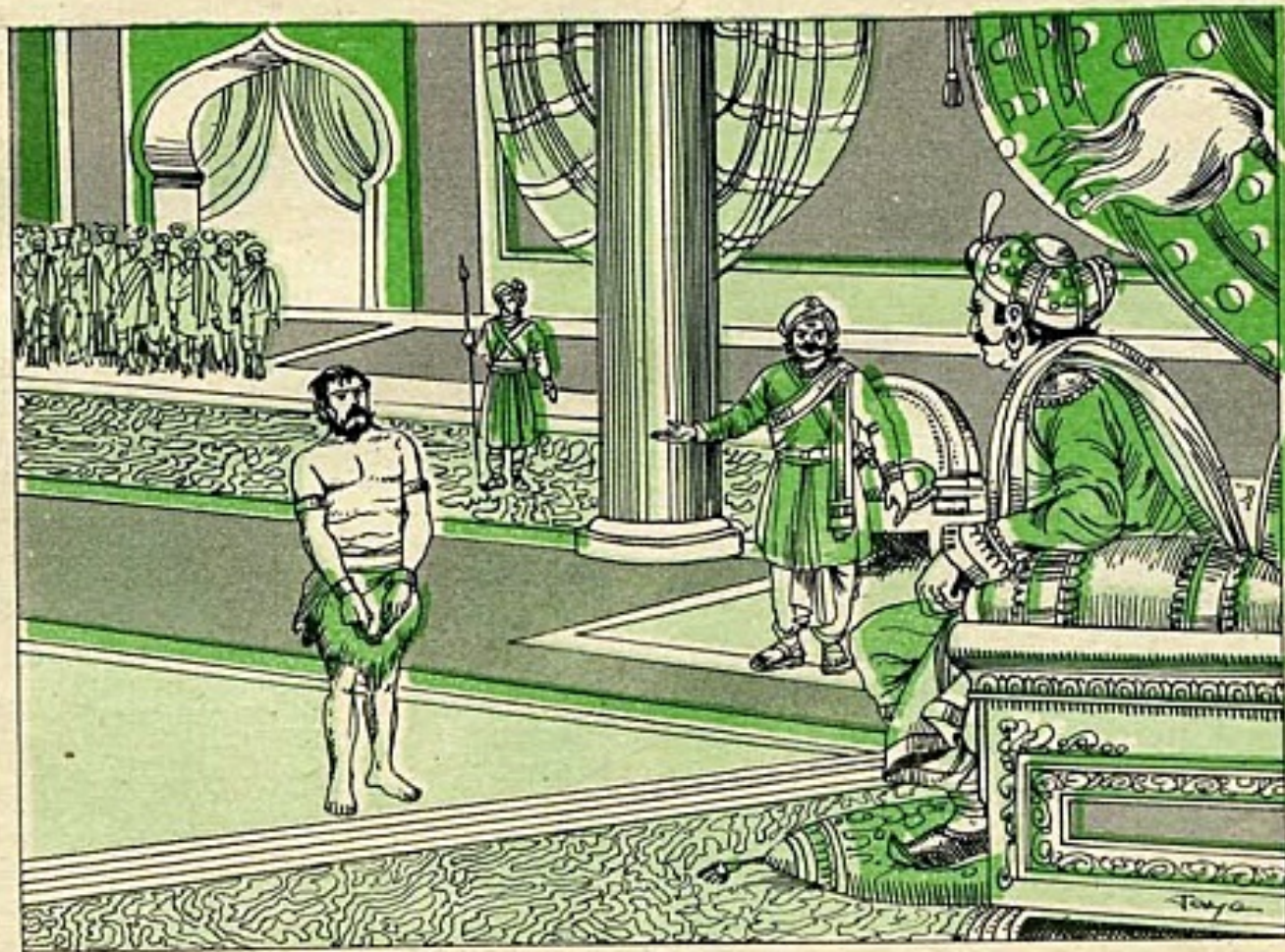
सच्चा मानव

एक गांव में कनकदत्त नामक बड़ा धनी था। वह अपनी संपत्ति से संतुष्ठ न था, उल्टे उसे और बढ़ाने के लिए बड़े से बड़े अत्याचार और अन्याय करने से हिचकता न था। कई परिवार उसके इन अत्याचारों के शिकार हो गये थे। उसने धीरे-धीरे सारे गांव का शोषण किया।

कनकदत्त की पत्नी सुमती भोली भाली गृहिणी थी। अन्य मानवों के प्रति उसके मन में बड़ी सहानुभूति थी। दूसरों को कठिनाइयों में फंसे देख उसका दिल पिघल जाता था। वह अपने पति के व्यवहार से असंतुष्ट थी। जब भी मौक़ा मिलता, तब वह अपने पति को समझाया करती थी— "हमारे पास इतनी संपत्ति है। आप इससे संतुष्ट क्यों नहीं हो जाते? और कितने दिन इस प्रकार आप दूसरे मानवों का शोषण करना चाहते हैं?" पर वैसे कनकदत्त अपनी पत्नी के प्रति अत्यंत प्यार और आदर दिखाता था, मगर उसकी इस सलाह पर वह कतई ध्यान नहीं देता था।

उन्हीं दिनों में दयानिधि नामक एक योगी उस प्रदेश में आया! उसने गाँव की सीमा पर नदी के किनारे एक कुटी बनाई, इस तरह वहाँ पर एक आश्रम बन गया। उस आश्रम में योगी ने फलों के कई पौधे लगवाये। उनमें से एक आम के पौधे में पहली बार फल लगे। उस पेड़ के फलों के बारे में लोग कई अद्भुत कहानियाँ सुनाने लगे। इसकी वजह यह थी कि जो आदमी उस पेड़ के नीचे जाकर उसका फल तोड़कर खा लेता, वह आदमी अपनी प्रकृति के अनुरूप कोई न कोई जानवर बन जाता, मगर पेड़ के नीचे से बाहर आने पर वह साधारण आदमी बन जाता था।

मोहनलाल कश्यप

कई लोगों में यह परिवर्तन होते गाँव के लोगों ने खुद अपनी आँखों से देखा था। इस अद्भुत को देखने कनकदत्त और उसकी पत्नी भी आश्रम में पहुँचे। वहाँ पर बड़ी भीड़ लगी थी। लोग बड़े ही उत्साह के साथ उस अद्भुत को देख रहे थे।

सब के देखते एक अधेढ़ उम्र का योद्धा जो कई लड़ाइयों में भाग ले चुका था, पेड़ के नीचे गया। फल खाकर शेर के रूप में बदलकर गरजते भीड़ पर कूद पड़ा और साधारण आदमी के रूप में बदल गया।

इसी प्रकार उस गाँव का एक शिक्षक दुधारू गाय के रूप में बदल गया। अपने दुश्मनों की फ़सल में आग लगानेवाला एक आदमी नाग बनकर फुतकार कर उठा। कनकदत्त का एक नौकर कुत्ते का रूप धारण कर भौं भौं चिल्लाने लगा। सब लोगों को उपदेश देनेवाला एक आदमी गधा बनकर रेंकने लगा। इसके बाद गाँव के कई लोग अपनी निजी प्रकृति का परिचय पाने की कामना रखने लगे, मगर लोगों पर उनका स्वभाव प्रकट हो जाएगा, इस डर से फल खाने में कतराने लगे।

कनकदत्त के मन में भी यह इच्छा जागृत हुई कि वह भी फल खाकर यह जान ले कि वह किस रूप को धारण करेगा। लेकिन उसके जैसा धनी व प्रतिष्ठित व्यक्ति अगर कोई गधा या

सुअर के रूप में बदल जाएगा तो लोगों की नज़र में गिर जाएगा। इसलिए उसने सब की आँख बचाकर फल खाने का निश्चय किया।

उसी दिन आधी रात के वक़्त कनकदत्त अपनी पत्नी को साथ ले आश्रम में पहुँचा। दोनों ने आम के वृक्ष के नीचे जाकर दो फल तोड़कर खाये। पर सुमती में कोई परिवर्तन न आया, लेकिन कनकदत्त ब्रह्मराक्षस बनकर "भूख! भूख! यहाँ पर किसी मानव की गंध आ रही है!" चिल्लाते सुमती को पकड़ने को हुआ। सुमती डर गई और बचकर गाँव की ओर दौड़ गई। उसका पीछा करनेवाला कनकदत्त अपना पूर्व रूप पाकर पत्नी को रुकने को कहने लगा, मगर सुमती ने उसकी बातों पर ध्यान न दिया।

इसके बाद सुमती ने अपने पति के साथ गृहस्थी निभाने से इनकार किया। कनकदत्त आश्रम में जाकर दयानिधि को अपने साथ ले आया।

दयानिधि ने मीठे शब्दों में सुमती को समझाया–"बेटी! तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। तुम्हारे पति के अन्दर राक्षस के लक्षण ज़रूर हैं, मगर वह सचमुच राक्षस नहीं है। पेड़ के नीचे का फल खाने पर उसे राक्षस का रूप प्राप्त हुआ। मैंने वह पेड़ कटवा दिया है। आइंदा तुम्हारे पति का रूप बदल जाने का खतरा नहीं है। तुम अपने पति के साथ बिना डर के अब गृहस्थी चला सकती हो।" इसके बाद दयानिधि ने कनकदत्त को समझाया–"भाई! समस्त प्राणियों में मानव उत्तम प्राणी है। मानव के रूप में जन्म धारण करनेवाले को मानव के रूप में जीना होगा। ऐसी हालत में तुम नर भक्षक के रूप में जीते हो? यह कैसी लज्जा की बात है?"

योगी की बातें सुनने पर कनकदत्त का सिर शर्म के मारे झुक गया। उस दिन से कनकदत्त अपना कलंक धोने के लिए पत्नी की बातों को मानने लगा।
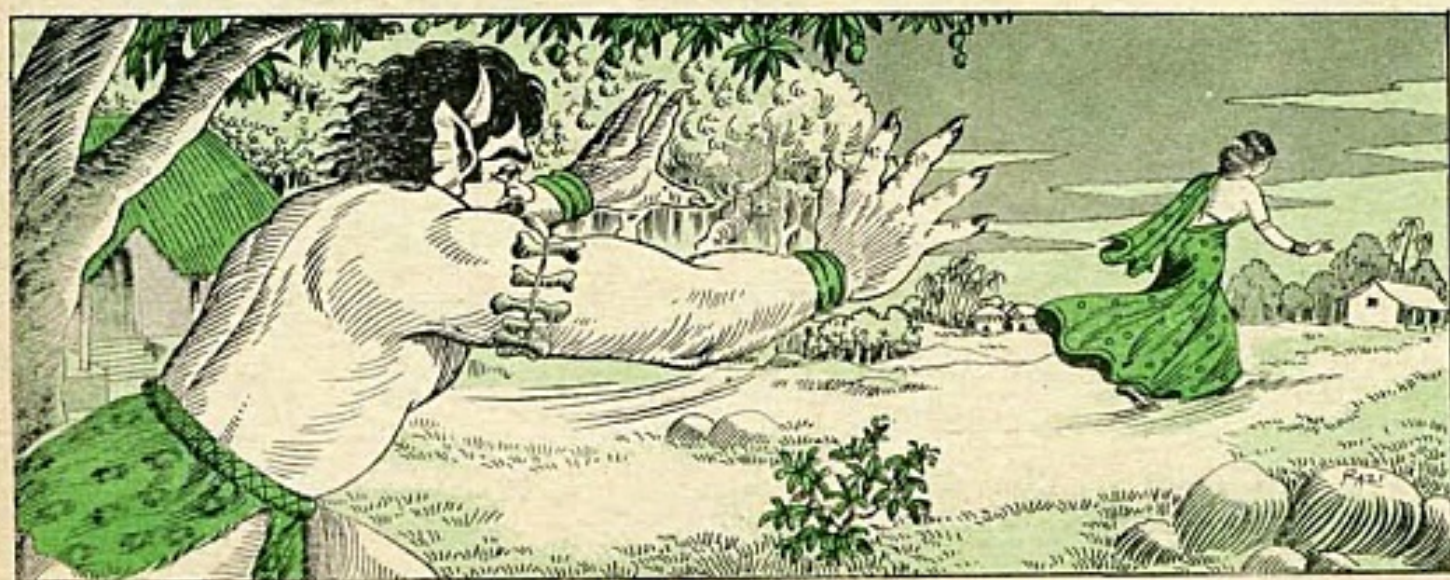
अध्यक्ष की अक्लमंदी

जीव कारुण्य संघ का अध्यक्ष जब भी बैठक बुलाता एक भी सदस्य हाज़िर नहीं होता था ।

इसलिए एक दिन अध्यक्ष ने घोषणा की कि अगली बैठक की अध्यक्षता जमीन्दार साहब करनेवाले हैं । फिर क्या था, सभी सदस्य हाज़िर हुए । मगर जब उन्हें पता चला कि जमीन्दार साहब बैठक में हाज़िर नहीं हो रहे हैं, तब एक एक करके सभी सदस्य खिसकने लगे । इस पर अध्यक्ष ने कहा–"दोस्तों ! आप में से किसीने गाड़ीवाले को किराया चुकाये बिना उसे बाहर खड़ा रखा है । मैं नहीं समझता कि जीवकारुण्य संघ के सदस्यों में से कोई ऐसा व्यक्ति भी होगा जो घोड़ा और गाड़ीवाले के प्रति ऐसी निर्दयता दिखाते हो । अगर कोई किराया चुकाना भूल गये हों तो कृपया बाहर जाकर किराया चुकाइये ।"

फिर क्या था, बैठक के समाप्त होने तक कोई वहाँ से उठा नहीं ।
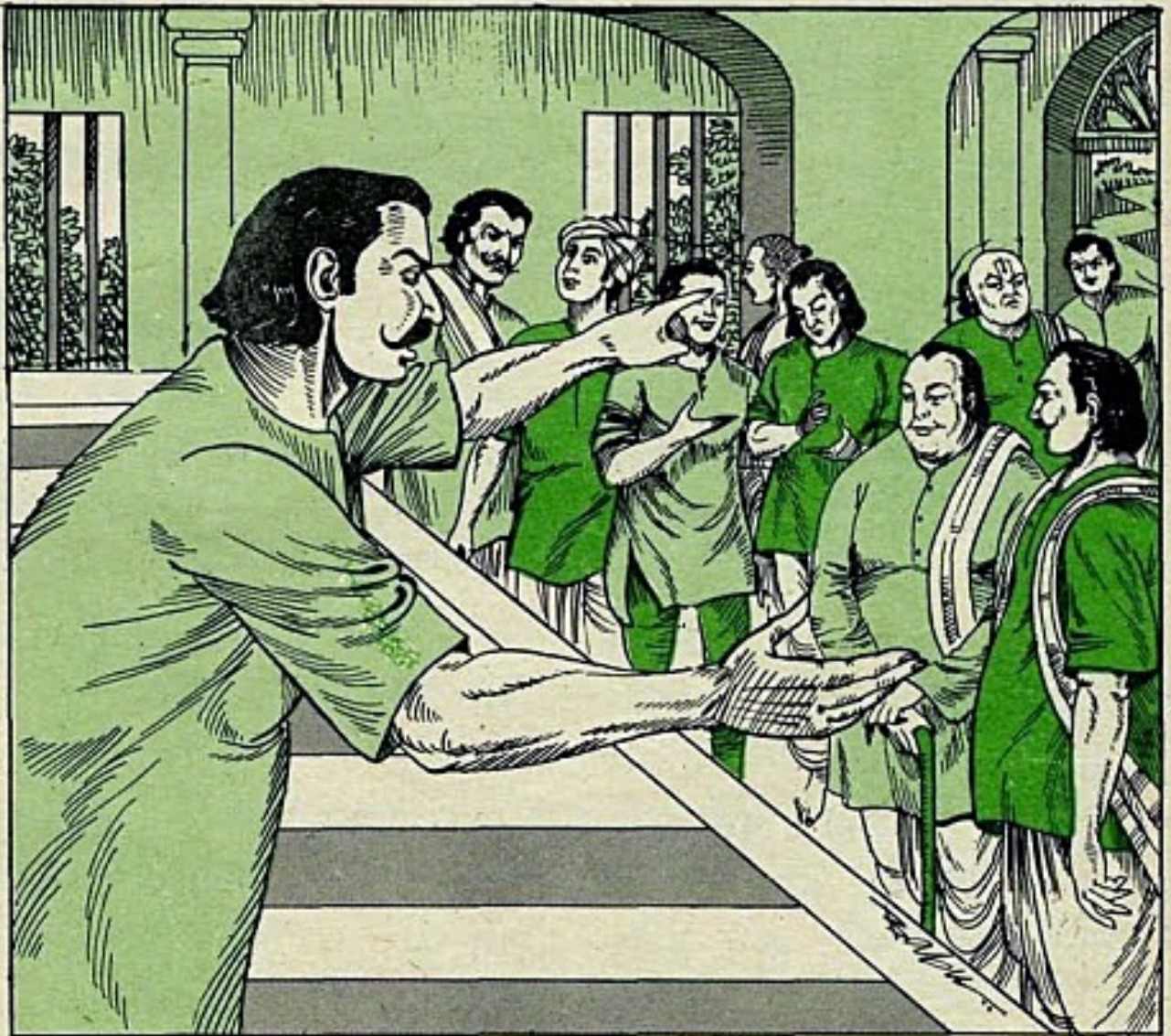
शील की परीक्षा

प्रतापगढ़ के जमीन्दार रुद्रनारायण का पुत्र रवि नारायण सुंदर और बुद्धिवान भी था। उसका विवाह सुखसागर के जमीन्दार की पुत्री सुलता के साथ संपन्न हुआ। उन दोनों गाँवों के बीच काफी लंबी दूरी थी। यातायात की कोई सुविधा भी न थी। बीच में जंगल भी पड़ता था। उस प्रदेश में सागरदिघी नामक एक तालाब था जिसके चारों ओर आम का एक बगीचा था। वह प्रदेश चोर और डाकुओं के लिए बहुत ही मशहूर था।

सुलता अपनी ससुराल में अपने मीठे व्यवहार के कारण सब का प्रेम पात्र बन गई। थोड़े दिन बाद सुख सागर से थोड़े लोग आ पहुँचे। उन लोगों ने रुद्रनारायण से मिलकर बताया कि सुलता की माँ बीमार है, इसलिए उन्हें अपने मायके भिजवा दें। यह बात सुखसागर के जमीन्दार के दीवान ने बताई। इस कारण रुद्रनारायण सुलता को अपने मायके भेजने से इनकार न कर सका। साथ ही रास्ते में चोर-डाकुओं से जरूरत पड़ने पर लड़ने के लिए थोड़े हथियार बंद नौकरों को भी भेजा।

यात्रा आराम से शुरू हुई। सुलता ने पालकी का एक किवाड़ खोलकर प्राकृतिक सौंदर्य को देखा और वह बहुत ही आनंदित हो उठी। दुपहर के भोजन के समय सबने एक विशाल बरगद के नीचे अपना पड़ाव डाला। सबने भोजन किया। घंटे भर आराम करके फिर उस दल ने अपनी यात्रा चालू की।

सागर दिघी के समीप पहुँचते-पहुँचते सूर्यास्त हो गया। उस प्रदेश में पहुँचते ही सुलता घबरा गई और अपने पिता तथा

ससुर के द्वारा भेजे गये अंग रक्षकों के सरदारों के सामने उसने अपना भय व्यक्त किया ।

सरदारों ने सुलता को हिम्मत बंधाते हुए समझाया—"बेटी! आप चिंता न करें। हम उन डाकुओं को प्राणों के साथ न छोड़ेंगे । उनका सामना करना तो हमारे लिए बायें हाथ का खेल है ।"

लेकिन बात कुछ और हुई । अनेक डाकू 'हर-हर महादेव!' चिल्लाते अचानक उन पर हमला कर बैठे। भयंकर युद्ध करके कई अंग रक्षकों को मार डाला । कुछ अंग रक्षक घायल हो गये और बचे हुए लोग भाग खड़े हुए ।

अंधेरा फैल रहा था । डाकू मशाल जलाकर पालकी के समीप पहुँचे । सुलता ने अपने थोड़े आभूषण निकालकर पोटली बांध डाकुओं की ओर फेंक दिया ।

डाकुओं के सरदार ने अपने अनुचरों को हुकम दिया—"सुनो, तुम लोग पालकी को उठाकर हमारे डेरे में पहुँचा दो!" चार डाकुओं ने पालकी को अपने कंधों पर उठाया । एक डाकू पालकी के पीछे चलने लगा । वह लोभ भरी नज़र से सुलता की ओर ताक रहा था । इसे भांपकर सुलता मुस्कुरा पड़ी और एक गहना निकालकर उसके हाथ दे दिया । उसने बड़ी आतुरता के साथ गहने को जेब का हवाला कर दिया । इसके बाद सुलता ने उसे पान का बीड़ा दे दिया । एक बीड़ा उसने ख़ुद अपने मुँह में डाल लिया । डाकू पान का बीड़ा चबाकर दूसरे ही क्षण मरकर गिर पड़ा ।

पालकी ढोनेवाले डाकू पालकी को उतारकर अपने अनुचर को देखने गये । सुलता ने देखा कि चारों डाकू मृत डाकू को घेरे हुए हैं और पालकी का कोई पहरा नहीं है । वह पालकी के दूसरी तरफ़ के किवाड़ से उतर पड़ी और जंगल में भाग गई । बड़ी दूर जाने के बाद वह एक पेड़ पर चढ़ गई और साड़ी के आंचल

से अपने को एक डाल से बांध लिया, तब वह भी बेहोश हो गई ।

सुलता अपने मायके से ससुराल जाते वक़्त अपने साथ जहर से भरे पान के दो बीड़े ले गई थी जो मान हानि के वक़्त वे काम में लाये जाते हैं । जहाँ पर लड़ाई हुई थी, वहाँ से डाकू अपने मरे व घायल साथियों को ढोकर ले गये । उनके जाने के बाद सुलता के साथ आकर जो लोग भाग गये थे, वे लौट आये । उनके दल में भी कुछ प्रमुख व्यक्ति मर गये थे । घायल व्यक्तियों का इलाज़ किया गया ।

सवेरा हुआ । डाकुओं के हमले और सुलता के खो जाने का समाचार इधर प्रतापगढ़ और उधर सुखसागर में भी पहुँचा ।

सुलता जहाँ पर पेड़ पर चढ़ गई थी, उसके समीप में हरिदास नामक एक वैष्णव साधू का आश्रम था । साधू अपनी पूजा के लिए फूल चुनने गया और उसने पेड़ पर सुलता को देखा । वह पेड़ पर चढ़ गया, पेड़ की डाल से सुलता को उतारकर अपने आश्रम में ले गया । वहाँ पर उसे होश में लाया । उसकी परिचर्या की । जब सुलता ने अपने पिता के घर जाने की इच्छा प्रकट की, तब साधू ने उसे सुखसागर पहुँचा दिया ।

सुलता के अपने मायके पहुँचने का समाचार सुनकर प्रतापगढ़ के लोग ज्यादा प्रसन्न नहीं हुए । उनका संदेह था कि डाकुओं के हाथों में पड़ी औरत का शील ही कहाँ बचा रहेगा ?

सुलता ने हरिदास से बताया—"साधू महाराज! अब मैं अपने पति के घर शायद नहीं जा सकती, क्योंकि मेरी सास मुझे स्वीकार नहीं करेंगी । इसलिए मेरे लिए अब सिवाय आत्महत्या के कोई दूसरा मार्ग दिखाई नहीं देता ।"

"बेटी, तुम निर्दोष हो! मेरी अंतरात्मा तो यही बता रही है । तुम जल्दबाजी में आकर आत्महत्या मत करो । मैं तुम्हारे

ससुर व पति से मिलकर बात कर लूँगा। मैं उन्हें समझाने की कोशिश करूँगा कि तुम्हारा शील नष्ट नहीं हुआ है।" हरिदास ने समझाया।

इसके बाद हरिदास तुरंत प्रतापगढ़ चला गया। गुप्त रूप से रविनारायण से मिलकर जान लिया कि रविनारायण के मन में सुलता की पवित्रता पर विश्वास है। वह इस वक्त भी सुलता के साथ वही प्यार रखता है जो पहले से था। उसने हरिदास को बताया-"मगर मेरे पिताजी अंधविश्वास के अनुयायी और हठी हैं। कोई ज़बर्दस्त सबूत मिलने पर ही वे विश्वास कर सकेंगे। न मालूम आप उनके मन में कैसे परिवर्तन लायेंगे? यह जिम्मेदारी आप की है।"

ये बातें सुनने पर हरिदास के चेहरे पर मुस्कुराहट खिल गई। वे सुलता तथा उसके पिता को लेकर प्रतापगढ़ पहुँचे। मगर रुद्रनारायण ने अपनी बहू को अपने घर में क़दम रखने नहीं दिया। इस कारण हरिदास, सुलता और उसके पिता अतिथि गृह में ठहर गये।

हरिदास ने रुद्रनारायण को समझाया- "मैंने प्रमाण सहित जान लिया है कि सुलता पवित्र है। डाकुओं ने उसका स्पर्श तक नहीं किया है।"

"मैं केवल आप की बातों पर विश्वास नहीं कर सकता। गाँववाले संभवतः मेरा आक्षेप कर सकते हैं।" रुद्रनारायण ने अपना संदेह व्यक्त किया।

"तब तो हम ईश्वर के निर्णय को अंतिम निर्णय मान लेंगे। मैं समझता हूँ कि कोई अद्भुत प्रमाण मिल जाये तो आप को कोई आपत्ति न होगी?" हरिदास ने पूछा।

"ऐसी हालत में किसे आपत्ति हो सकती है?" रुद्रनारायण ने कहा।

इसके बाद रुद्रनारायण के घर के आंगन में उनके रिश्तेदार और मित्र जमा हुए। वहाँ पर सुलता और उसके पिता

भी आ पहुँचे। हरिदास ने एक मोम का ढेला, एक कांच का गिलास और एक चिमटा लाकर सब को दिखाया। इसके बाद एक छोटी सी मेज़ लाकर रुद्रनारायण के सामने रखा। गिलास में गंगा जल भरकर हरिदास ने रुद्रनारायण को चिमटे की मदद से मोम के ढेले को जल के नीचे रखने को कहा। मगर ज्यों ही रुद्रनारायण ने मोम के ढेले से चिमटे को अलग किया, त्यों ही मोम का ढेला तिर गया। इसके बाद वहाँ के कई लोगों ने उस ढेले को पानी के भीतर डुबो देने की कोशिश की, मगर वह मोम का ढेला बराबर पानी पर तिरता ही गया।

अंत में हरिदास ने सुलता को बुलाकर कहा—"बेटी, तुम अपनी पवित्रता के कारण शायद इस मोम के ढेले को डुबोकर रख सकोगी, कोशिश करके देखो। सीता देवी ने अपने पातिव्रत्य को आग में कूदकर साबित किया है। तुम भी यह प्रयत्न करके देखो......" यों कहकर मेज को उसके समीप खिसका दिया और कांच के गिलास को मेज़ के एक छोर पर रख दिया। सुलता ने मोम के ढेले को चिमटे से पकड़कर जल में रखा और चिमटे को बाहर निकला। पर इस बार मोम का ढेला जल के नीचे ही रह गया। ऊपर नहीं आया।

इस दृश्य को देख सब ने हर्षनाद किये। सुलता को उसके ससुर ने आदरपूर्वक स्वीकार कर लिया। तब हरिदास ने दोनों जमीन्दारों को चेतावनी दी कि सागरदिघी प्रदेश को डाकुओं से स्थाई रूप से मुक्त करने का प्रयत्न करें।

हरिदास ने जो जादू किया, वह क्या था? मोम का ढेला सिर्फ़ मोम से न बना था। एक पोलवाले लोहे के टुकड़े पर चारों ओर मोम चिपका दिया गया था। मोम की वजह से वह ढेला पानी पर तिर गया, पर मेज़ के छोर के नीचे एक ज़बर्दस्त चुंबक था जिसने लोहे को खींचकर तिरने नहीं दिया था।

उधार का हार

प्रभुदास और गोकुलदास दो भाई थे।

वे अपने पिता के मरने पर घर बांटकर अलग-अलग हिस्सों में रहने लगे थे। प्रभुदास की पत्नी विमला बड़ी योग्य औरत थी।

पर गोकुलदास की पत्नी रमाबाई बड़ी धूर्त थी। वह विमला के परिवार को सुखी देख मन ही मन जलने लगी।

थोड़े समय बाद विमला ने एक चन्द्रहार बनवा लिया। इसे देख रमाबाई ईर्ष्या से भर उठी। उसने विमला के घर जाकर कहा—"दीदी! तुम अपना हार उधार में दो! मैं भी उसी तरह का हार बनवाना चाहती हूँ।"

विमला ने झट अपना चन्द्रहार लाकर रमाबाई के हाथ दे दिया।

कई दिन बीत गये। लेकिन रमाबाई ने विमला को वह हार लौटाया नहीं। एक दिन विमला ने अपना हार लौटाने को कहा भी। इस पर रमाबाई क्रोध में आ गई और डांट कर बोली—"कैसा हार दीदी? मेरे पास बहुत सारे गहने हैं। तुम्हारे हार को लेने की मुझे जरूरत ही क्या पड़ी थी? तुम गाँव के लोगों के बीच क्या हमें बदनाम करना चाहती हो?"

ये बातें सुनने पर विमला की आँखों में आँसू आ गये! रमाबाई ने न केवल उसका चन्द्रहार हड़प लिया था, उल्टे उसका अपमान भी किया। इस पर वह बहुत दुखी हुई, लेकिन अपने क्रोध को पीकर वह चुपचाप अपने घर लौट आई।

विमला ने यह बात अपने पति को सुनाई, पर उसने यही जवाब दिया—"जाने दो, रमाबाई पराई थोड़े ही है?"

दो-चार महीने बाद विमला की बेटी अपने मायके में आई। उसने सुना कि

कमला कौशिक

किस तरह उसकी माँ के साथ अन्याय हुआ है, अपनी माता का जो अपमान हुआ था, उसका बदला लेने का उसने मन ही मन निश्चय कर लिया। रमाबाई जरूर उसे देखने आ जाएगी, उस वक़्त क्या क्या करना होगा, यह योजना उसने अपनी माँ को बताई।

अखिर विमला की बेटी को देखने रमाबाई आ ही गई। उसके प्रवेश करते विमला की बेटी ने देख लिया, फिर भी अनदेखी का अभिनय करते उसने अपनी माँ से कहा—"माँ, मैंने सुना है कि तुमने कोई चन्द्रहार बनवा लिया है। तुमने तो मुझे दिखाया तक नहीं, क्या बात है?"

रमाबाई विमला के घर पहुँचते रुक गई और उनकी बातचीत सुनने लगी।

"बेटी, मैंने वह चन्द्रहार बनवाया नहीं था। किसीने रास्ते में तुम्हारे बाबूजी के हाथ बेचना चाहा, मैंने खरीद लिया, लेकिन बाद को मालूम हुआ कि वह चोरी का माल है! पर क़िस्मत की बात थी, मैंने उसका पिंड छुड़वा लिया है।" विमला ने अपनी बेटी से कहा।

"सो कैसे?" विमला की बेटी ने अपनी माँ से अचरज में आकर पूछा।

"मैंने उसे तुम्हारी चाची को उधार में दिया है। उसने उसे अपने ही पास रख लिया है। अच्छा हुआ कि इस बीच मुझे पता चला कि वह चोरी का माल है। इसीलिए जब तुम्हारी चाची ने यह कहा कि मैंने वह चन्द्रहार नहीं लिया है, फिर भी मैं चुप रह गई। कल या परसों सिपाही तलाशी लेने आयेंगे। वह हार जिसके पास होगा, उसी को पकड़ ले जाकर सच बताने के लिए ख़ूब सतायेंगे।" विमला ने सारा किस्सा सुनाया।

ये बातें सुनने पर रमाबाई के पैर काँप उठे। वह अपने घर लौट गई।

सुबह उठकर विमला देखती क्या है, उसका चन्द्रहार उसके घर में फ़र्श पर पड़ा हुआ है। अपनी योजना के सफल हुए देख माँ-बेटी बहुत खुश हो गईं।

पशुपाल शंभू

शंभूनाथ भोला आदमी था। अपने गाँव में जीविका का कोई जरिया न देख राम नगर में आया और जानकी प्रसाद के घर पशुपाल बना।

एक दिन शंभू बैलों को बांध रहा था, तब जानकी प्रसाद की पत्नी गौरी शंभू से बोली–"शंभू! सुनो तो! अभी तक भैंस चारागाह से नहीं लौटी है। बछड़ा रंभा रहा है, जल्दी जाकर भैंस को ढूंढ लाओ।"

अंधेरा हो चला था। शंभू सुबह दो सूखी रोटी खाकर खेत में चला गया था। इसलिए उसे बड़ी जोर की भूख लगी थी। पर वह जानता था कि यह बात गौरी से बताने पर भी कोई फ़ायदा न होगा, शंभू कंबल ओढ़े लाठी हाथ में लेकर चल पड़ा। कहीं भैंस का पता न चला। उल्टे उसके पैर दुख रहे थे। घर लौटने पर भैंस को न देख गौरी उसे गालियाँ देगी। यों विचार करके शंभू एक उजड़े मंदिर के एक कोने में दुबककर बैठ गया।

आधी रात के क़रीब दो चोर वहाँ आ पहुँचे। वे आपस में बातचीत करने लगे–"इन गहनों को हमारे साथ रखना ठीक नहीं है। चोरी की बात जब सब लोग भूल जायेंगे, तब इन्हें ले जायेंगे! तब तक इन्हें यहीं छिपा रखेंगे।" यों निर्णय करके चोरों ने एक कोने में गड्ढा खोदा और गहनों की गठरी उसमें छिपाकर मिट्टी डाल दी और चले गये।

शंभू ने सोचा कि गहनों की गठरी ले जाकर गौरी के हाथ सौंप दे तो वह भैंस को न पाकर भी उसे गालियाँ न देगी। यों सोचकर गहनों की गठरी ले शंभू घर चल पड़ा। शंभू थका-मांदा था, तिस पर भूख से परेशान था। उसके घर पहुँचते आधी रात हो गई।

देवेन्द्रनाथ वर्मा

आधी रात के वक़्त खाली हाथ लौटे शंभू को देख गौरी उस पर बिगड़ उठी, पर गहनों की गठरी पाकर खुश हो गई ।

"माईजी! भूख से परेशान हूँ, रोटी के दो टुकड़े दो ।" शंभू ने पूछा ।

"अबे, आधी रात तक तुम्हारा इंतज़ार करती रही, लेकिन तुम न आये । अभी अभी मैंने तुम्हारी रोटियाँ कुत्ते को खिला दीं । अब कुछ नहीं है । जाकर सो जाओ ।" यों कहकर गौरी ने किवाड़ बंद किये ।

थकावट के मारे शिथिल हुए शरीर को घसीटते शंभू मवेशीखाने में जाकर लेट गया ।

गौरी ने सोनेवाले अपने पति को जगाकर गहनों की गठरी दिखाई । गठरी खोल गहनों को देखते ही जानकी प्रसाद का कलेजा कांप उठा । वह बोला-"अरी सुनो तो! ये गहने साधारण गहने नहीं हैं । राजा-महाराजाओं के से लगते हैं । अगर पता चल गया कि ये गहने हमारे पास हैं तो हमारी जान की खैर नहीं है ।"

"हम इसका पता लगने दें, तब न पता चलेगा?" गौरी ने युक्ति बताई ।

"हमें बतलाने की क्या ज़रूरत है? भूल से अगर शंभू ने कहीं यह रहस्य खोल दिया तो समझ लो, हम तबाह हो गये ।" जानकी प्रसाद ने समझाया ।

सवेरे तक उन गहनों को बचाने का उपाय सोचकर गौरी शंभू को घर के भीतर बुला लाई और डांटकर बोली-"शंभू! तुम हम्हीं को दगा देते हो? गठरी में गहने हैं कहाँ? देख लो! हमने कभी न सोचा था कि तुम झूठ बोलोगे?"

शंभू तो पहले ही भोला था, वह और भोला बनते बोला-"माईजी, मैंने गठरी खोलकर नहीं देखा । सिर्फ़ चोरों की बातें सुन लीं ।"

"अच्छा हुआ कि मैंने तुरंत देख लिया । इसमें तो कंकड़ भरे हुए हैं । सवेरा होने के पहले ही तुम इन कंकड़ों

को ले जाकर जहाँ से लाये हो, वहीं फेंक आओ।" यों समझाकर गौरी ने शंभू के हाथ कंकड़ों की गठरी थमा दी।

शंभू गठरी ले गया। उजड़े मंदिर के एक कोने में जब वह गड्ढा खोदकर छिपाने लगा, तब चोरों ने उसे देख लिया। उन्हें संदेह हुआ। चोरों ने शंभू का पीछा किया और उसे जानकी प्रसाद के घर में घुसते देख लिया।

उस रात को चोरों ने मंदिर में जाकर गड्ढा खोदकर गठरी निकाली, उसमें कंकड़ भरे पड़े थे।

इस बीच सारे गाँवों में ढिंढोरा पीटा गया कि रानी के गहनों की चोरी हो गई है, जो चोरों को पकड़ा देगा, उसे राजा एक हज़ार रुपयों का पुरस्कार देंगे। यह ढिंढोरा सुनकर जानकी प्रसाद एकदम डर गया।

"तुम नाहक़ डरते क्यों हो? गठरी में तो कंकड़ भरे थे न?" इन शब्दों के साथ गौरी ने जानकी प्रसाद को अपनी युक्ति बता दी। चार-पाँच दिन सब कहीं रानी के गहनों की चोरी की चर्चा चलती रही। इसके बाद धीरे-धीरे लोग यह बात भूल गये।

अब गौरी की हिम्मत बंध गई। उसके मन में गहने पहनने का लोभ पैदा हुआ। रात के वक़्त सब के सो जाने के बाद गौरी गहने पहन लेती, आइने में अपने प्रतिबिंब को देख फूले न समाती थी।
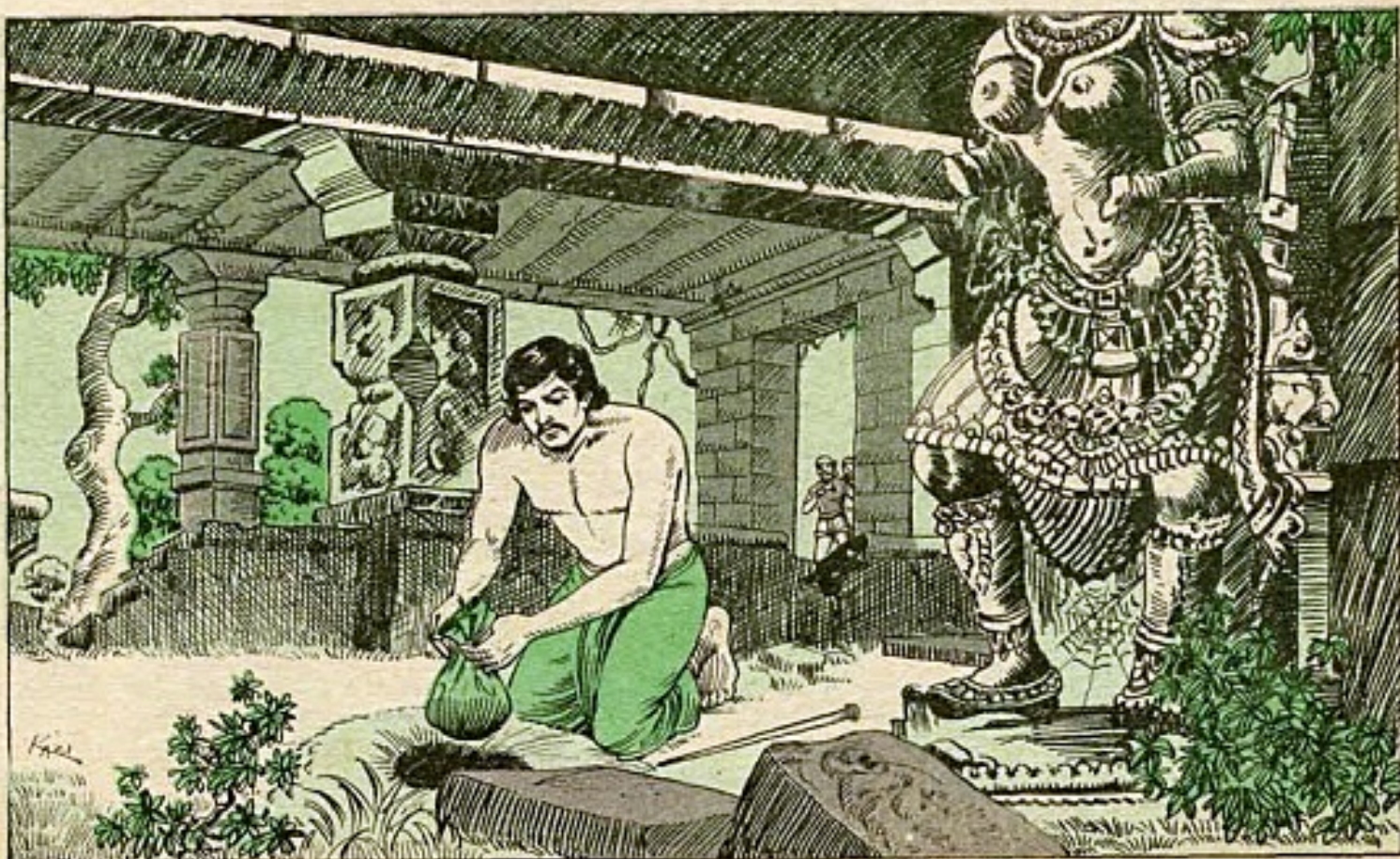
शंभू को लगा कि घर में कोई आहट हो रही है, वह उठकर चला गया। उसने किवाड़ के दरार में से अन्दर झांककर देखा। गौरी गहने पहनकर आइने के सामने खड़ी हुई थी। शंभू के आश्चर्य की कोई सीमा न रही। उसने सोचा कि गौरी ने उसके साथ दगा दिया है, फिर वह मवेशीखाने में जाकर लेट गया, पर उसे नींद न आई।

इतने में चोर आ धमके। किवाड़ खट-खटाते पुकारने लगे—"बहनोईजी! दर्वाजा खोलो।"

"कौन है?" गौरी ने पूछा।

"मैं ही हूँ, गौरी! राम प्रसाद हूँ।" चोर ने जवाब दिया।

"भैया! इतनी रात बीते क्यों आये?" ये शब्द कहते गौरी ने किवाड़ खोल दिये। पर बाहर चोरों को देख झट से किवाड़ बंद करने को हुई, लेकिन इस बीच दोनों चोर किवाड़ ढकेलकर अन्दर आये, भीतर से कुंडी चढ़ाकर गौरी को खंभे से बांध दिया। गौरी जान के डर से भयभीत हो ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी।

गौरी की चिल्लाहट सुनकर जानकी प्रसाद जाग उठा। चोरों ने उसे भी बांध दिया। गौरी के बदन पर के सारे गहने लूट लिये और सारे घर को लूटने के लिए घर की तलाशी लेने लगे। तभी शंभू उठकर चला आया, हालत जानकर उसने बाहर से दर्वाजे पर कुंडी चढ़ाई। राजभटों को बुलवाकर चोरों को उनका हवाला कर दिया।

इसके बाद राजदरबार में चोरी की सुनवाई हुई। शंभू के मुँह से सारा वृत्तांत सुनकर राजा ने उसे एक हज़ार रुपये का पुरस्कार दे दिया। चोरी का माल छिपाने के अपराध में गौरी और जानकी प्रसाद को एकाध साल का कारावास का दण्ड और चोरों को आजीवन दण्ड दिया गया।

पुरस्कार की रक़म से शंभू ने थोड़ी-सी जमीन खरीद ली। खेती करके अपने दिन काटने लगा।
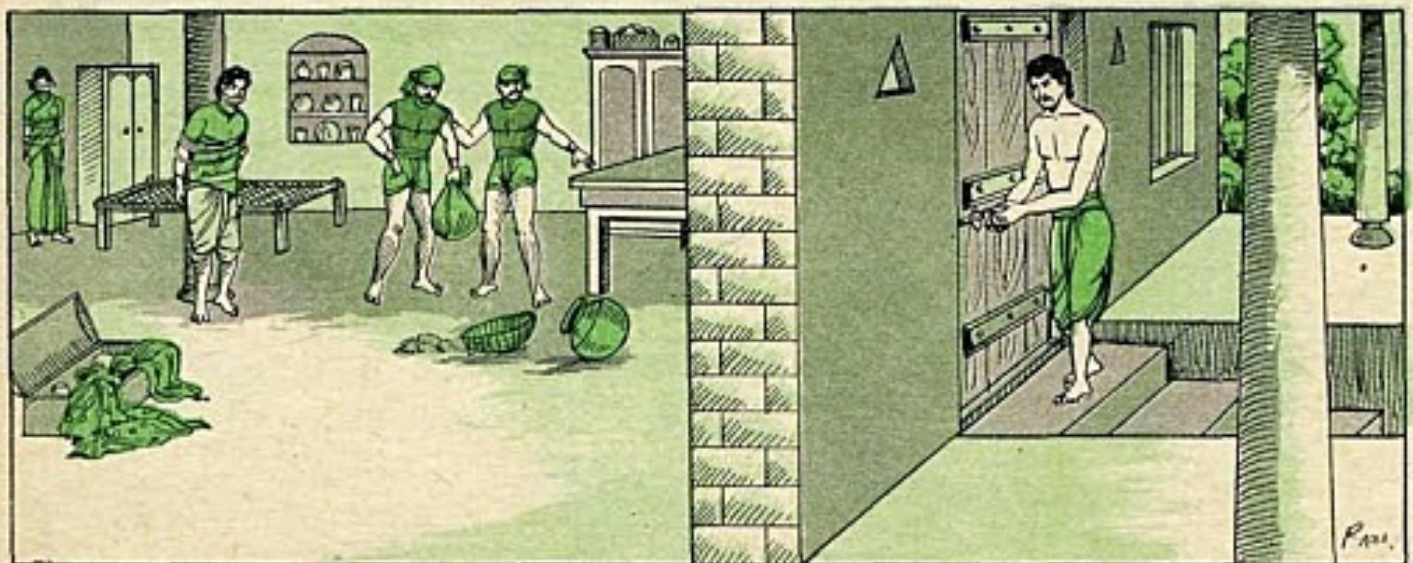
सपनों की लत

पुराने जमाने की बात है। एक राजा को सपने सुनने की बुरी लत थी। इसलिए राजा ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि जो आदमी राजा को अनोखे सपने सुनाएगा, उसे बढ़िया इनाम दिया जाएगा। ढिंढोरा सुनकर देश के कोने कोने से हज़ारों आदमी राजा को अपने सपने सुनाकर इनाम पाने के लिए राजधानी में आ धमके। उन सबके खाने व ठहरने का प्रबंध करने के लिए राजा ने मंत्री को आदेश दिया।

राजा की आज्ञा सुनने पर मंत्री को बड़ा क्रोध आया। मंत्री ने कहीं से हज़ारों गधे मँगवाये और सपने सुनानेवाले लोगों के अड्डे के चारों तरफ़ खड़ा कर दियें।

राजा को जब पता चला कि गधे सपने सुनानेवालों को बाहर आने से रोक रहे हैं, इस पर राजा ने गधों का समाचार पूछा।

मंत्री ने शांत स्वर में उत्तर दिया–"महाराज! वैसे कोई ख़ास बात नहीं है। श्रीमुख नामक किसी धनवान से किसी ने बताया कि गानेवाले गधे हैं। इस पर गानेवाले गधों को बुलवाने का ढिंढोरा पिटवाया गया। देश के कोने कोने से गधे आ धमके। अब मेरी समझ में नहीं आता कि इन गधों से कैसे पिंड छुड़ाया जाय!"

इस पर राजा के सपने सुनने की लत जाती रही।
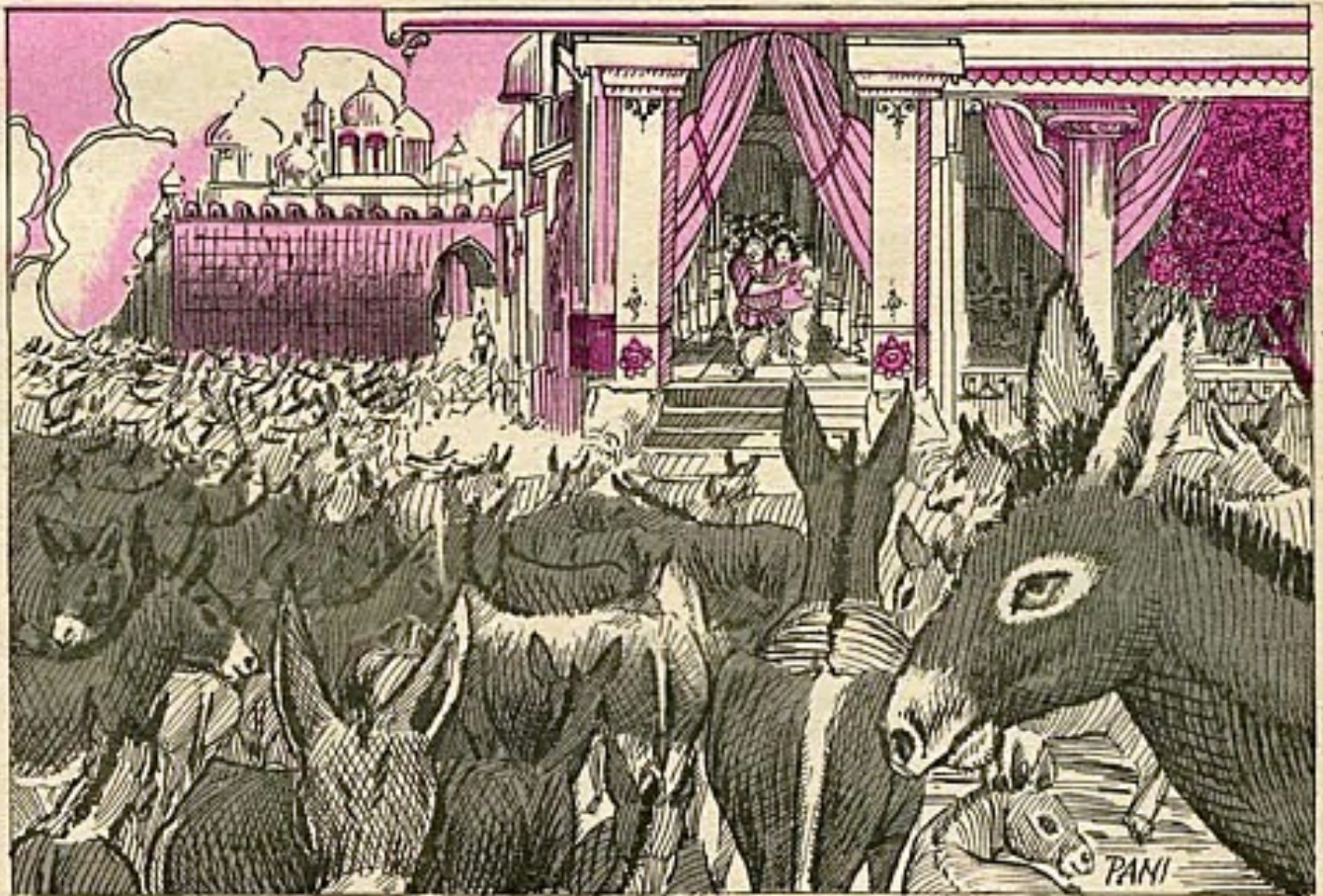
पानी का प्रभाव

एक गाँव में मंगल नामक एक कुशल तैराक था। एक जमीन्दार उसकी तैरने की कला पर खुश हुआ और उसे कांसे की एक मूर्ति भेंट की। वह मूर्ति विलायत से मंगाई गई थी। बहुत सारा धन खर्च करने पर भी वह खरीदी नहीं जा सकती थी।

एक बार मंगल राजधानी में वसंतोत्सव देखने चला। तब उसने सोचा कि अपनी क़ीमती मूर्ति को घर पर छोड़ जाना उचित नहीं है। यों सोचकर वह उस मूर्ति को ले सेठ मूलचन्द के घर पहुँचा और उसके लौटने तक सुरक्षित रखने का निवेदन किया।

मूलचन्द ने सोचा कि ऐसी सुंदर मूर्ति एक गरीब के घर की अपेक्षा उसके घर में रहने से ज्यादा शोभादायक होगी। यों विचार कर मंगल के सामने उसे खरीदने की इच्छा प्रकट की। उसने पूछा–"मंगल, इसे मेरे हाथ बेच दोगे?"

"सेठ साहब! यह बेचने की चीज़ नहीं है। मेरे लौटने तक आप इसे अपने यहाँ सावधानी से रखिये।" मंगल ने जवाब दिया। क्योंकि वह मूर्ति मंगल की कला का चिह्न थी।

मूलचन्द ने मन में सोचा–"ओह! इसे ऐसा घमण्ड! मैं भी देख लेता हूँ कि यह कैसे मेरे हाथ न लगेगी?" यों सोचकर उसने उसी वक़्त अपने मन में निश्चय कर लिया कि किसी भी हालत में यह मूर्ति मंगल को लौटानी नहीं है। उसने उस मूर्ति की मदद से सांचे ढलवाकर उसी प्रकार की एक मिट्टी की मूरत तैयार कराई और उस पर पीतल का मुलम्मा चढ़वा दिया। मंगल के लौटने पर उसे दे दिया।

माधवराव भोंसले

मंगल मूर्ति को ले घर पहुँचा, जब उसे अपनी जगह् रखने को हुआ, तब उसे मूलचन्द के दगे का पता चल गया। क्योंकि मूर्ति के आले में रखते वक़्त कांसे की धातू की आवाज़ न निकली। अलावा इसके मूर्ति के घिसने पर भीतर से मिट्टी निकल आई।

उसी वक़्त मंगल मूर्ति को लेकर मूल चन्द के घर पहुँचा और बोला—"सेठ साहब! आप ने मेरी असली मूर्ति छिपाकर मिट्टी की यह् मूर्ति मुझे दे दी! यह् आप जैसे धनी के लिए शोभा नहीं देता। कृपया मेरी मूर्ति मुझे लौटा दीजिए।"

"मंगल! मैं क्या जानूं? तुमने मेरे हाथ जो मूर्ति दी, मैंने वही तुम्हें लौटा दी। शायद मेरे कुएँ के पानी से धोने पर तुम्हारा कांसा मिट्टी के रूप में बदल गया हो! यह् तो पानी का प्रभाव है। हम कर ही क्या सकते हैं?" मूल चन्द ने जवाब दिया।

मंगल लाचार हो घर लौट आया। मगर मौक़ा मिलने पर उसने सेठ को उचित सबक़ सिखाना चाहा।

एक दिन मूल चन्द की पत्नी कुएँ से पानी भर रही थी, तब उबहन के टूट जाने से पीतल का कलश कुएँ में जा गिरा।

कुआँ काफी गहरा था। सारे गाँव के लिए वही एक पीने के जल का कुआँ था। उस कुएँ में उतर कर सिर्फ़ मंगल ही कलश निकाल सकता था। वैसे मूल चन्द मंगल

को बुलवाकर कलश निकालवाना नहीं चाहता था, मगर लाचार था। इसलिए मूल चन्द ने मंगल से कलश निकालने का अनुरोध किया।

"सेठजी! यह कौन बड़ी बात है? कल सुबह मैं जरूर आप का कलश कुएँ से निकालकर दे दूँगा।" मंगल ने कहा।

उस दिन आधी रात के बीतने पर मंगल मिट्टी का एक घड़ा लेकर कुएँ के पास पहुँचा। कुएँ में उतरकर कांसे का कलश निकाला, उसके उबहन को मिट्टी के घड़े से बांध दिया, मिट्टी के घड़े को कुएँ में छोड़ कांसे के कलश को एक गुप्त प्रदेश में छिपाया, तब घर जाकर सो गया।

दूसरे दिन सेठ को साथ ले मंगल कुएँ के पास पहुँचा, कुएँ में उतरकर पानी में डुबकी लगाई और कांसे के कलश की जगह मिट्टी का घड़ा ऊपर ले आया। उसे देख सेठ का चेहरा पीला पड़ गया। वह घबरा कर बोला—"मंगल! यह घड़ा हमारा नहीं, किसी और का होगा! मेहरबानी करके तुम एक बार और डुबकी लगाकर ढूंढ़ लो।"

मंगल ने पानी में डुबकी लगाई, बड़ी देर बाद जल के ऊपर आकर बोला—"सेठ साहब! इस कुएँ में मिट्टी के इस घड़े को छोड़ कोई दूसरा घड़ा नहीं है। शायद पानी के प्रभाव से आप का कांसे का कलश मिट्टी का घड़ा बन गया हो! आप तो पानी के प्रभाव को अच्छी तरह से जानते हैं।" यों कहकर मंगल अपना घर चला गया।

इसके बाद सेठ मूलचन्द ने मजदूरी देकर दो-चार लोगों से कुएँ का सारा जल निकलवाया। पर कुएँ में टीकरों को छोड़ कुछ दिखाई न दिया। उस दिन सारे गाँववालों को पीने के लिए जल बचा न था, इसलिए सबने सेठ साहब की निंदा की।

उस दिन रात को सेठ साहब चुपके से मंगल के घर पहुँचा, अपनी भूल स्वीकार करके उसे कांसे की मूर्ति वापस कर दी और अपने पीतल का घड़ा ले आया।
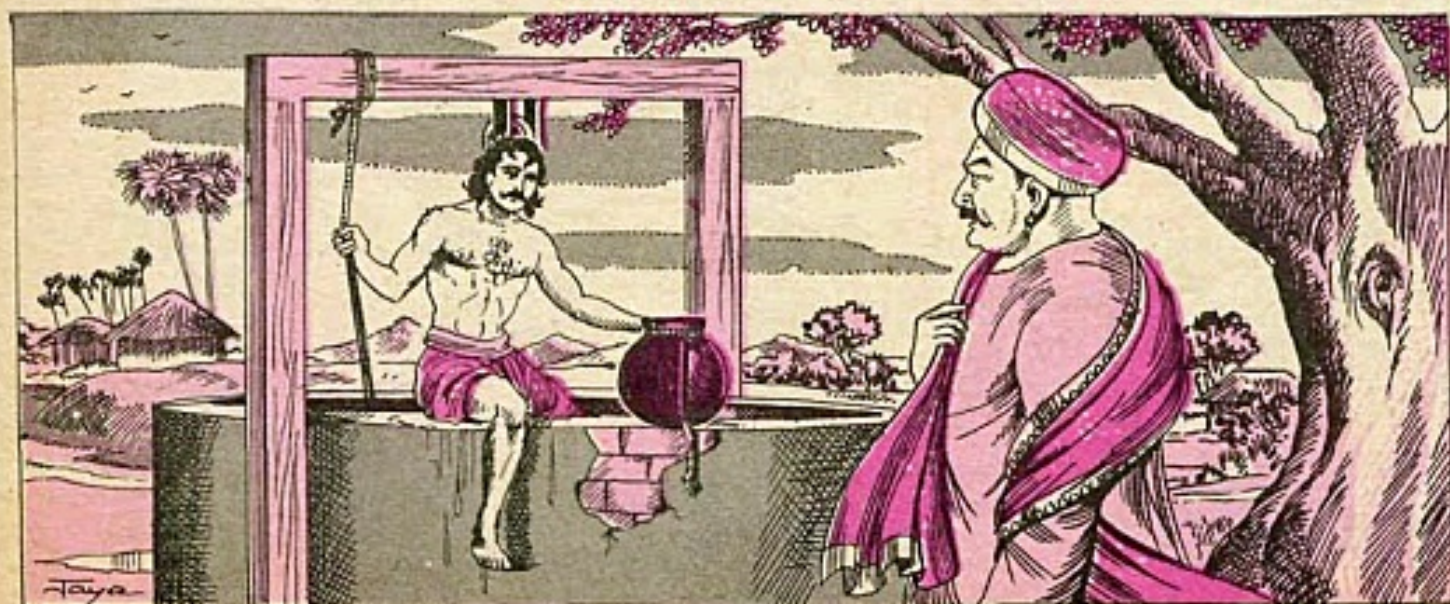
उचित सबक़

अवंती के राजा सुवर्ण सेन का एक सामंत राजा वीरपाल था। वीरपाल ने अपने को स्वतंत्र घोषित करके राजशुल्क चुकाने से इनकार किया। इस पर सुवर्ण सेन ने अपने मंत्री को आदेश दिया कि वीरपाल पर युद्ध घोषित करके युद्ध की तैयारियाँ की जाय।

मंत्री ने सलाह दी—"महाराज! फिलहाल अवंती में अराजकता फैली हुई है। साथ ही यह बरसात का मौसम है, लड़ाई के लिए उचित समय नहीं है। आप कृपया थोड़े दिन रुक जाइएगा तो उचित होगा।" पर राजा ने मंत्री की बात नहीं मानी।

युवराज सुबुद्धि ने राजा और मंत्री की बातचीत सुन ली। उसने अपने पिता को उचित सबक़ सिखाना चाहा। राजा सुवर्ण सेन प्रति दिन शाम को उद्यान में टहलने जाया करते थे। उस वक्त युवराज एक आम के पेड़ को पानी सिंचवाते दिखाई दिया।

राजा ने उस विचित्र दृश्य को देख अपने पुत्र से पूछा—"बेटा! यह तो बरसात का मौसम है, ऐसी हालत में तुम आम के पेड़ को क्यों सिंचवा रहे हो?"

"मुझे जल्दी आम चाहिए।" सुबुद्धि ने जवाब दिया।

"पर यह तो फलों के लगने का मौसम नहीं है न?" राजा ने पूछा।

"जब युद्ध के लिए कोई मौसम नहीं होता तो फलों के लिए क्यों होता है?" सुबुद्धि ने उल्टा सवाल किया। फिर क्या था, राजा ने युद्ध की तैयारियाँ बंद करवा दी।

ससुराल में दामाद

एक गाँव में सावित्री नामक एक औरत थी। उसके शिवराम नामक एक पुत्र था। शिवराम की शादी ताराबाई के साथ हुई। शिवराम अपनी पत्नी को हद से ज़्यादा प्यार करता था, फिर भी खेतीबाड़ी करते अपने परिवार को सुखी रखने की पूरी कोशिश करता था।

एक बार किसी मौक़े पर ताराबाई अपने मायके चली गई। शिवराम अपनी पत्नी को छोड़ एक दिन भी रह नहीं सकता था। दो दिन बाद वह अपनी पत्नी को लाने ससुराल पहुँचा।

ससुराल में शिवराम की बड़ी आवभगत हुई। सास ने उसे ख़ूब खिलाया-पिलाया। इस पर शिवराम सोचने लगा कि उसे ससुराल स्वर्ग जैसा सुख देनेवाला है। वह अपनी औरत को अपने घर ले जाना भूल गया। ताराबाई ने कई बार उसे याद दिलाई कि हमें जल्दी अपने घर जाना चाहिए। ज़्यादा दिन ससुराल में रहने से तुम्हारी इज़्ज़त धूल में मिल जाएगी। फिर भी शिवराम ने पत्नी की बात पर कोई ध्यान न दिया। पीहर में और थोड़े दिन बिताना किसी भी औरत के लिए आनंद दायक होता है, इसलिए ताराबाई भी चुप रह गई।

एक महीना बीत गया, लेकिन शिवराम अपने घर जाने का नाम न लेता था। धीरे धीरे उसके ससुर और सालों के व्यवहार में परिवर्तन आने लगा। अब वे लोग हाथ-पैर धोने के लिए पानी लाकर देते न थे। कुएँ की ओर सिर्फ़ इशारा कर देते थे।

एक दिन शिवराम का ससुर खेत पर जाते उसे भी अपने साथ ले गया। वहाँ पर धान माप रहे थे। बड़ा साला वहीं

यमुना दत्त

खड़ा रहा, लेकिन शिवराम को देखकर भी वह मुस्कुराया तक नहीं, इस पर शिवराम का दिल कचोट उठा। साला धान का हिसाब अपने बाप के हाथ दे घर जाने की बात कहकर चला गया।

थोड़ी देर बाद ससुर भी शिवराम से यह कहकर कि 'मैं अभी थोड़ी देर में लौट आता हूँ।' कहीं चला गया। अब धान मापने की जिम्मेदारी उसी पर आ गई। उसने धान तौलवाया, गाड़ी पर लदवाकर घर ले आया।

शिवराम को देखते ही ससुर ने कहा—"ओह! यह क्या हो गया? धान घर लाने के लिए नहीं, शहर में ले जाकर बेचने के लिए हमने वहाँ रख छोड़ा था!"

ये शब्द सुनकर शिवराम लाचार हो धान को शहर में ले गया, अच्छे भाव पर बेचकर तीन दिन बाद घर लौट आया। तीनों दिन उसे काफ़ी दौड़ धूप करनी पड़ी। वक़्त पर खाना नहीं मिला था। सारा बदन दुख रहा था, इसलिए शिवराम ने सोचा कि गरम पानी से नहा-धोकर खाने के बाद मीठी नींद सो ले।

लेकिन घर पहुँचकर शिवराम ने देखा, दर्वाजे पर ताला पड़ा था। पड़ोसिन से पूछने पर पता चला कि पड़ोसी गाँव में रामलीला देखने के लिए सारा परिवार चला गया है। अब लाचार हो शिवराम घर के बाहर चबूतरे पर लेट गया।

सवेरा होने पर सभी लोग बैलगाड़ी पर लौट आये। उनके साथ ताराबाई की बड़ी बहन और उसका जीजा भी आये। मगर किसी ने शिवराम की सुध तक न ली। पर उसके साढ़ू की बड़ी आवभगत हो रही थी। इसे देख शिवराम को बड़ा गुस्सा आया। अब शिवराम नहाने के ख्याल से गरम पानी बाल्टी में भर रहा था, तभी छोटे साले ने आकर उसके हाथ से लोटा खींच लिया और कहा—"यह पानी बड़े बहनोई के लिए है, समझें!"

शिवराम जब खाने बैठा, तब उसे सूखी रोटी व दाल परोसी गई और बड़े दामाद को पूड़ी और हल्वा परोसा गया। इसे देख शिवराम के क्रोध का पारा चढ़ गया, वह तेजी के साथ ताराबाई के कमरे में घुस आया और डांटने लगा—"क्या वही एक इस घर का दामाद है? मैं नहीं हूँ? तुम्हारे माँ-बाप और भाई मेरी इस तरह बेइज्ज़ती कर रहे हैं और तुम देखते हुए भी चुप हो?"

ताराबाई ने इतमीनान से जवाब दिया—"अजी, सुनिये तो! जब आप यहाँ आये, तब मेरे माँ-बाप ने सोचा कि आप मुझे लेने आये हैं, मगर इन लोगों ने यह नहीं सोचा था कि आप घर जमाई दामाद बनकर बैठे रहेंगे। दो-चार दिन तो ससुराल में दामाद की बड़ी आवभगत होती है! लेकिन महीनों तक कौन कर सकता है? इस ख्याल से मेरे माँ-बाप ने आपके साथ मेरी शादी की कि आप ज़िंदगी भर मेरा भरण-पोषण करेंगे, पर आप का और मेरे भी भरण-पोषण का भार अपने ऊपर लेने के लिए नहीं! आपके साले जैसे आपके साथ व्यवहार करते हैं, वैसा ही व्यवहार मेरी भाभियाँ मेरे साथ कर रही हैं! मैं किसको अपना दुखड़ा सुनाऊँ? अब तक हमारी जो इज्ज़त हुई, बस, काफी है। चलिए, हम अपने घर चले चलेंगे।" शिवराम को अपनी भूल मालूम हुई। वह उसी वक़्त अपनी पत्नी को साथ ले अपने गाँव चल पड़ा।

राम-नाम का स्मरण करते हनुमान गंधमादन पर्वत पर तप कर रहे थे, उस समय ब्रह्मा ने उन्हें दर्शन देकर कहा– "हनुमान! कलियुग प्रवेश करने जा रहा है। कलि के साथ तुम्हारा नहीं बैठेगा। इसलिए तुम इन युगों से अतीत क्षीर सागर में चले जाओ।" यों चेतावनी दे ब्रह्मा चले गये।

क्षीर सागर में शेष शय्या पर शयन करनेवाले भगवान विष्णु के यहाँ तुंबुर और नारद सदा संगीत सुनाया करते हैं। नारद अपनी 'महती' वीणा का नाद करते सदा भक्ति प्रधान गीतों का गान किया करते हैं। तुंबुर 'हयग्रीवा' वीणा पर मृदंग की ध्वनियों को भी ध्वनित करते हुए ताल प्रधान शास्त्रीय संगीत सुनाया करते हैं।

वे दोनों परस्पर एक दूसरे से अपने को बड़े संगीतज्ञ मानकर इस अहंकार के साथ परस्पर ईर्ष्या-द्वेष बढ़ाते रहे हैं।

वे हर छोटी-सी बात पर स्पर्धा करते संगीत को बंद कर दूषण और तिरस्कारों के साथ वीणाओं को गदाओं की भांति उठाकर न केवल आपस में लड़ते-झगड़ते थे बल्कि भगवान विष्णु को भी सदा-सर्वदा अकारण तंग करने लगे–"भगवान! आप ही बताइये, हम दोनों में महान संगीतज्ञ कौन हैं?"

भगवान विष्णु उन्हें शांत करने में परेशानी का अनुभव करते योग निद्रा में

४८. भविष्य-ब्रह्मा

निमग्न हो जाते थे, फिर भी वे दोनों उनके दो कानों के पास पहुँचकर सताने लगते–"आप बताते हैं कि नहीं? हम दोनों में महान संगीतज्ञ कौन हैं? आप जब तक अपना निर्णय नहीं बतायेंगे, तब तक हम आप को नहीं छोड़ेंगे।"

इस पर भगवान विष्णु ऊब गये और बोले–"तुम लोगों का संगीत सुनकर मैं तन्मय हो योग निद्रा में डूबता उतरता रहता हूँ। गंधमादन पर्वत पर एक बंदर है। उससे कह दो कि रामचन्द्र तुम्हें बुला रहे हैं, उसे यहाँ लाओगे तो वही तुम्हारे संगीत का बड़प्पन पहचानकर सही निर्णय दे सकता है।"

तुंबुर और नारद यह उत्तर सुनकर विस्मय में आ गये। तब एक दूसरे पर क्रोध भरी दृष्टि प्रसारितकर गंधमादन पर्वत पर पहुँचे, उस वक़्त हनुमान लगातार राम नाम का जाप कर रहे थे जो उन्हें ओंकार नाद जैसा सुनाई दिया। वे दोनों पहाड़ पर जाकर हनुमान के समीप खड़े हो गये। हनुमान आँखें मूँदकर राम नाम का पाठ उतार-चढ़ाव के साथ स्वरयुक्त गान कर रहे थे। उस जाप में संगीत के कई राग एक साथ ध्वनित हो रहे थे। उन रागों के सम्मेलन में कई नये राग उत्पन्न हो रहे थे।

'रा–म' नामक दो अक्षर अनेक ताल व गतियों के साथ लय-विन्यास कर रहे थे। तुंबुर और नारद उस अपूर्व गान को सुन चकित रह गये। वे जिस काम से आये थे, उसे भूल गये और उन लोगों ने भांप लिया कि हनुमान संगीत के एक विशेषज्ञ ही नहीं बल्कि एक महान नादोपासक हैं। वे यह जान गये कि साहित्य और शास्त्र की अपेक्षा गात्र-माधुर्य कैसा महान होता है! वे भी तन्मय हो हनुमान के स्वर में स्वर मिलाकर राम-नाम का जाप करने लगे।

हनुमान के गंभीर मंद्र रव के साथ जब उनके स्वर न मिले, तब अप श्रुति और

अप स्वर होने के कारण हनुमान ने आँखें खोल दीं। तन्मय हो आँखें बंदकर राम का स्मरण करनेवाले तुंबुर और नारद को देख वे झट उठ खड़े हुए। तब उन्होंने उनके चरणों का स्पर्श कर अपनी आँखों से लगाया।

तुंबुर और नारद हनुमान के शीतल करों का स्पर्श पाकर होश में आये, अपने पैर खींचकर बोले–"महानुभाव, आप यह क्या कर रहे हैं? ऐसे महान न होकर आप हमारे चरणों का स्पर्श करते हैं? शायद आप हमें नहीं जानते! हम तुंबुर और नारद हैं!"

"चाहे आप कोई भी हों, पर जो लोग राम नाम का स्मरण करते हैं, वे सब मेरे आराध्य हैं। मैं उनके चरणों की धूलि अपने सर पर लेता हूँ। इसी में मुझे संतोष है, आनंद है।" हनुमान ने समझाया।

तुंबुर और नारद ने समझ लिया कि हनुमान कैसे एक महान गानकला के कोविद और भक्त हैं, वे आश्चर्य में आकर एक दूसरे के चेहरों का अवलोकन करने लगे। इसके बाद उन्होंने अपने आगमन के कारण की याद की, तुंबुर ने कहा–"महानुभाव! रामचन्द्रजी ने आप को अपने यहाँ लिवा ले जाने के लिए हमें भेजा है। वे इस समय क्षीर सागर में शेष शय्या पर विराजमान हैं।" आप कृपया शीघ्र हमारे साथ चलिए।"

"सीताजी भगवान विष्णु के चरण दबा रही हैं। लक्ष्मण सहस्त्र फणवाले छत्र धारण किये हुए हैं। भरत और शत्रुघ्न उनके कंधों के पास हैं।" नारद ने कहा।

इसके बाद हनुमान उनके साथ क्षीर सागर में पहुँचे। गरुड़ ने आगे बढ़कर उनका स्वागत किया, प्रसन्नता के मारे हनुमान के कंधों पर हाथ डालकर कुशल-प्रान किये, तब उन्हें विष्णु के पास ले गये।

भगवान विष्णु हनुमान को रामचन्द्र जैसे ही दिखाई दिये। उन्होंने स्मरण किया, विष्णु ही राम हैं। रामचन्द्रजी विष्णु के अवतार हैं। तब हनुमान ने अत्यंत भक्ति भाव से झुककर हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया।

भगवान विष्णु ने हनुमान से कहा– "हनुमान! तुंबुर और नारद में होड़ लगी हुई है, हमने इसलिए तुम्हें बुला भेजा कि तुम उनके पांडित्य की परीक्षा लेकर अपना निर्णय दोगे! इनकी परीक्षा लेने के पहले तुम अपना थोड़ा संगीत हमें सुना दो।"

हनुमान ने नम्रतापूर्वक कहा–"हे राम! राम! मैं तो कोई संगीतवेत्ता नहीं हूँ, स रि ग म तक न जाननेवाला एक बंदर हूँ, वायु-पुत्र हूँ। मेरा संगीत केवल पवन गीत है। महानुभावों के समक्ष गाने की मैं शक्ति नहीं रखता।"

"हनुमान! तुम्हारे साथ सदा यही झंझट है। तुम अपनी शक्ति को नहीं पहचानते हो! तुमने सूर्य के यहाँ समस्त प्रकार के शास्त्र, कलाएँ तथा नवों प्रकार के व्याकरणों का पूर्ण रूप से अभ्यास किया है। जब तक कोई तुम्हारी शक्ति की याद नहीं दिलाते, तब तक तुम्हारे भीतर जोश पैदा नहीं होता। हम आदेश देते हैं, तुम गाओ!" भगवान विष्णु ने समझाया।

इस पर हनुमान ने अपने नाम का प्रथम अक्षर 'ह' कार के साथ 'हा' शब्द

का मंद्र व गंभीर स्वर में प्रारंभ करके भगवान विष्णु के लिए अत्यंत प्रिय हिन्दोल राग का आलाप किया। तुंबुर और नारद उस स्वर की मधुरिमा तथा गात्र गांभीर्य पर संभ्रम एवं आश्चर्य के साथ मुंह खोले, कान खड़े करके सुनने लगे।

हनुमान ने हिन्दोल राग को वैजयंती राग में बदलकर राम नाम लिया। 'राम' नामक दो अक्षरों को ही स्वर भेदों के साथ असंख्य ताल व गतियों में विभिन्न रागों में जब गान करने लगे तब क्षीर सागर की तरंगें नाचने लगीं। श्रोताओं के हृदयों में आनंद की तरंगें उभर आईं। तुंबुर और नारद के हृदयों में भक्ति की भावनाएँ उत्पन्न हुईं। हनुमान रागालाप करते चरम सीमा पर पहुँचे। क्षीर सागर की तरंगें उत्तुंग हो नक्षत्रों को ढकने लगीं। शेष नाग के हज़ार फण झूम उठे। हनुमान एक साथ मंद स्वर पर उतरकर 'देव गांधार' राग का आलाप करने लगे। शांत रस प्रधान उस राग के कारण क्षीर सागर क्रमशः जमकर घनीभूत हो गया। तुंबुर और नारद की हयग्रीवा व महती वीणाएँ उसमें धंस गईं। क्षीर सागर और घनीभूत हो संगमरमर पत्थर जैसे हो गया। शेष नाग दबकर तड़पने लगा।

विष्णु ने हनुमान को संगीत बंद करने का संकेत किया। अचानक संगीत के बंद होते ही तुंबुर और नारद चौंक गये और संगमरमर जैसे बने क्षीर सागर में धंसी अपनी वीणाओं को देखते रह गये।

इस पर भगवान विष्णु ने आदेश दिया—"नारद और तुंबुर! तुम लोग अपने संगीत के द्वारा सागर को गलाकर अपनी अपनी वीणाएँ ले लो।"

नारद के भक्ति प्रधान संगीत और तुंबुर के शास्त्र संगीत के द्वारा भी क्षीर सागर द्रवित न हुआ। नारद और तुंबुर अपने अभिमान पर लजा गये और दोनों नतमस्तक हुए।

इसके बाद विष्णु के आदेशानुसार हनुमान ने भूपाल, बसंत, जंझूटी, दीपक इत्यादि रागों द्वारा राम नाम का गान किया। तब राग-रागिनियाँ एक रूप को प्राप्त कर नृत्य करने लगीं। हनुमान का गान चरम सीमा को प्राप्त कर प्रलय कालीन कंपन करने लगा। शिवजी डमरुक बजाते तांडव नृत्य करते आ पहुँचे। उनके पीछे पार्वती, गणपति तथा प्रमध गण भी आये। ब्रह्मा पद्मासन से उतरकर आ पहुँचे। उनके साथ सरस्वती वीणा वादन करते आईं। इंद्र आदि देवता भी आये। क्षीर सागर तरंगों के द्वारा हिंडोल के समान झूलने लगा। उस समय क्षीर सागर एक विशाल विवाह वेदी के समान शोभित रहा। लक्ष्मी और नारायण नव वधू-वर जैसे दिखाई दिये। हनुमान यह सोचकर आनंद के मारे तन्मय हो डूब गये कि संभवत: सीताजी और रामचन्द्रजी का विवाह इसी प्रकार हुआ होगा। तुंबुर और नारद ने वीणाएँ उठाईं। शेष ने शय्या को ठीक कर लिया।

उस समय सरस्वती ने अपना निर्णय दिया–"हनुमान के संगीत की रीति हनुमद्गान नाम से प्रसिद्ध हो चिरकाल तक बना रहेगा! पंडित और पामरों को समान रूप से आकृष्ट करके हृदयों को उद्वेलित करता रहेगा। यही कला का चरम लक्ष्य है! नारद का संगीत भाव प्रधान है, तुंबुर का संगीत ताल प्रधान। भाव और ताल का समन्वय करानेवाली वस्तु राग है। भाव, राग और ताल तीनों समान हैं, पर राग प्राण तुल्य है। हृदय पर उसका प्रभाव अधिक पड़ता है। हनुमद्गान राग प्रधान होने के कारण वह सदा के लिए जनरंजक बनकर रहेगा।"

इसके बाद ब्रह्मा ने आगे बढ़कर कहा–"हनुमान! तुमने निष्काम भाव से तप किया। पर तुम्हारी तपस्या का मूल्यांकन करने पर उसके लिए ब्रह्मपद भी पर्याप्त नहीं है। पर इससे बढ़कर कोई दूसरा

पद नहीं है। तुम आगे होनेवाले ब्रह्मा हो! राम नाम के जाप द्वारा तुमने जो तप किया, उसी ने तुम्हें इस पद के योग्य बनाया। आनेवाले कल्प में तुम्हारे द्वारा सृष्टि उत्पन्न होगी!"

इसके अनंतर शिवजी ने आगे आकर कहा–"हनुमान! इस ब्रह्मा की सृष्टि में उत्तम लोगों की अपेक्षा दुष्ट लोग ही अधिक संख्या में पैदा हुए हैं, पैदा हो रहे हैं, पैदा होंगे। इसका कारण यह भी है कि अपने को देवता होने के अहंकार के कारण पूर्ण मानवता पर उनका गहरा विश्वास न रहना ही। तुम वानर भले ही हो, पर तुम्हारे ध्यान में सदा रामचन्द्रजी रहें, इस कारण तुम्हारी सृष्टि में रामचन्द्र जैसे पूर्ण मानव, सीताजी जैसी मानिनियाँ, लक्ष्मण जैसे भाई अधिक संख्या में होंगे। तब तक तुम भगवान विष्णु के सान्निध्य में रहो।"

तब ब्रह्मा बोले–"हाँ, हनुमान! शिवजी ने ठीक ही बताया है। अधिकांश अच्छे लोगों के बीच रास्ता भटकनेवाले थोड़े से लोग हो, तो उन्हें सही रास्ते पर लाना आसान होता है। यह काम तुम्हारी सृष्टि के अन्दर होगा। आनेवाले ब्रह्म कल्प में विष्णु की नाभि में से एक दम नया ब्रह्म कमल खिल उठेगा। उस पद्मासन को तुम ब्रह्मा के रूप में अलंकृत करोगे। तुम भावी ब्रह्मदेव हो! सृष्टिकर्ता हो!"

अंत में सबने हनुमान से अनुरोध किया कि वे मंगल गान करें। हनुमान ने 'श्रीराग' में विष्णु की स्तुति में मंगल गीत गाया।

इसके उपरांत नारद, तुंबुर और गरुड़ के साथ हनुमानजी क्षीर सागर में शेष शय्या पर विराजमान विष्णु के सान्निध्य में रहकर लक्ष्मी व नारायण की सीता-राम के रूप में सेवा करने लगे। हनुमान चिरंजीवी हैं। वे भविष्य ब्रह्मा हैं।

(समाप्त)

उदंक की कहानी

उदंक पैल का शिष्य था। पैल की पत्नी ने उदंक से माँग की कि गुरु-दक्षिणा के रूप में तुम पौष्य की पत्नी के कुण्डल लाकर मुझे सौंप दो।

उदंक ने पौष्य की पत्नी को मनाकर उसके कुंडल प्राप्त किये। मगर पौष्य की पत्नी ने उसे चेतावनी दी कि तक्षक इन कुंडलों का अपहरण कर सकता है, इसलिए तुम सावधान हो।
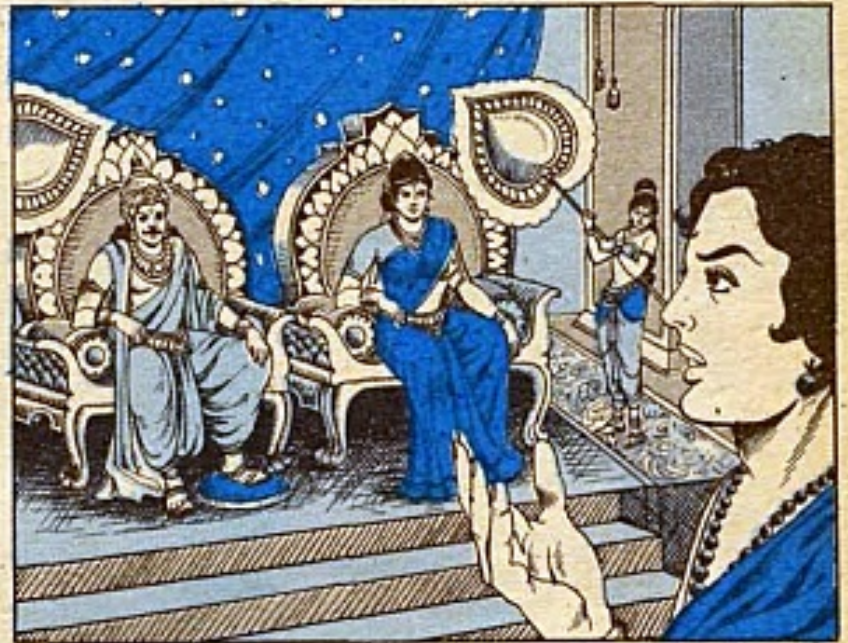
आखिर बात यही हुई। उदंक अपने गुरु के आश्रम को लौट रहा था। रास्ते में एक तालाब के तट पर कुंडल रखकर वह स्नान करने गया। उस वक्त तक्षक मानव रूप में आया और कुंडल लेकर भाग खड़ा हुआ। इसे देख उदंक ने उसका पीछा किया।

उदंक जब तक्षक को पकड़ने ही जा रहा था, तब तक्षक साँप का रूप धरकर एक बिल में घुस गया।

उदंक ने सोचा कि एक लाठी से बिल को खोदते हुए नाग लोक में पहुँच जाय, पर यह मुमकिन न था।

इसलिए उदंक ने इंद्र की प्रार्थना की। इन्द्र ने अपने वज्रायुध के द्वारा नाग लोक तक पहुंचने का मार्ग बनाया।

पाताल में उदंक ने अनेक अद्‌भुत देखे, दो नारियाँ सफ़ेद व काले धागों से एक वस्त्र बुन रही थीं। वे धागे रात और दिन थे।

एक दूसरे स्थान पर छे आदमी बारह दलोंवाला चक्र घुमा रहे थे, वे छे आदमी छे ऋतु थे। चक्र के दल बारह मास थे।

इसके बाद उसे घोड़ पर सवार एक दिव्य पुरुष दिखाई दिया। वे इन्द्र थे। उदंक ने उस पुरुष से निवेदन किया कि उसे अपने कुंडल वापस दिलवा दें।

दिव्य पुरुष की प्रेरणा के द्वारा घोड़े के नासपुटों और मुँह से भी आग की लपटें निकलीं और नाग लोक में तहलका मचाने लगीं ।

नाग जब जान के डर से कांप उठे तब इसे देख नागराज तक्षक ने उदंक के कुंडल लाकर वापस कर दिये ।

उदंक दिव्य पुरुष के घोड़े पर सवार हो लौट आया और गुरु पत्नी को कुंडल सौंप दिये । गुरु पत्नी यह सोचकर डर गई थी कि उसके व्रत के पूरा होने के पहले उसे कुंडल प्राप्त होनेवाले नहीं हैं, पर उदंक ने अपने वचन का पालन किया ।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए !

?

एक गाँव में एक बुजुर्ग था। वह जोड़ों के दर्द से परेशान था। इसलिए प्रति दिन मंदिर में जाकर ईश्वर से प्रार्थना किया करता था–"भगवान ! मैं जोड़ों के दर्द से मरा जा रहा हूँ। आप का भक्त हूँ। मेरी रक्षा कीजिए। आप ने कई भक्तों के कष्टों को दूर किया है। ऐसी हालत में मेरी यातनाओं को दूर करना आप के लिए कौन बड़ी बात है ?"

एक दिन वह बुजुर्ग ईश्वर की आराधना करके अपना घर लौट रहा था, तब एक स्वस्थ व्यक्ति ने प्रवेश करके ईश्वर से प्रार्थना की–"भगवान ! मेरे हाथ या पैर में लकवा लग जाय ! मुझे अपार कष्ट पहुँचा दो ! यह आप के लिए कौन बड़ी बात है ?"

"महाशय ! आप ईश्वर से कष्टों की माँग क्यों करते हैं ?" जोड़ों के दर्द से परेशान व्यक्ति ने पूछा।

इस पर स्वस्थ व्यक्ति ने उत्तर दिया–"महाशय, मैंने बड़ी कोशिश की, फिर भी ईश्वर के प्रति मेरे मन में श्रद्धा जम नहीं रही है। मेरी आशा है कि तुम जैसे मैं भी किसी रोग का शिकार हो जाऊँ तो शायद भगवान के प्रति भक्ति जम जाय !"

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्कांट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें अक्तूबर १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के दिसंबर '७८ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

अगस्त मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "समझ का फेर"

पुरस्कृत व्यक्ति: **बाबूलाल अग्रवाल,** VI/१२३ माहीडेम ३२७०२६ (राज)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ दिसंबर १९७८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Gopal Shroti

★

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अक्तूबर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अगस्त के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : क्षुधा जाने ना प्रीत!

द्वितीय फोटो : यह ममता की रीत!!

प्रेषक: उमा मिश्र, ओरियन्ट बाग, लाम रोड़, देवलाली-४२२४०१

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI.

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

Tobu

टोबू पहियेदार खिलौने

दुनियां भर में बच्चे इन्हें मज़े से चलाते हैं !

* 30 से भी अधिक देशों को निर्यात किये जाते हैं।
* अनेक डिज़ाइनों और रंगों में उपलब्ध
* गारंटी-युक्त उत्पादन

खिलौनों और साईकिलों की सभी प्रमुख दुकानों में मिलते हैं।

टोबू एन्टरप्राईजिज प्राईवेट लि०
8/29, कीर्ति नगर इन्डस्ट्रियल एरिया,
नई दिल्ली-110015

చందమామ අම්බිලි මාමා

Chandamama, now published in twelve Indian languages including English and entertaining millions of readers in India, makes its debut in Srilanka. To the President and people of Srilanka, we dedicate our inaugural issue in Sinhala.

AMBILIMAMA

CHANDAMAMA

the monthly magazine for children through which the old become young and the young remain young.

CHANDAMAMA PUBLICATION

फिर आया दीपों का त्यौहार...
फिर पहनिये इस बार
करोना के नये
चमचमाते जूते!
सेन्सेशन
दिलीप बेज
स्कॉलर
आशा
निकी
निर्माता:
करोना साहू कं. लि.
रजि. ऑफिस: २२१, दादाभाई नौरोजी रोड, बम्बई ४०० ००१
CHAITRA-CS-126 HIN

चल रही थी फ़िल्म, लोग चुप थे तमाम,
परदे पर थी हो रही, जोरों से धूम-धड़ाम.

खामोश हो गये लोग तमाम
पॉपिन्स ने था किया काम
खुश हो गये राम और श्याम.

रसीली प्यारी मज़ेदार

फलों के स्वादवाली गोलियां

PARLE POPPINS

५ फलों के स्वाद —
रासबरी, अननास, नींबू,
संतरा और मोसंबी.